फरवरी-2013 ◆ वर्ष 1 ◆ अंक 9 ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ-सौरभ

फरवरी -२०१३

सौरभ बिखरा
दिग्दिगन्त में
नील गगन घन में

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास

नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० १४

नवलखा महल उदयपुर

सारी दुनिया घूम ली पाया नहीं उजास ।
मन में सौ सूरज उगे पढ़ सत्यार्थ प्रकाश ॥१॥
एक साथ पच्चीस सौ आर्ष ग्रन्थ का सार ।
ऋत सत्यार्थ प्रकाश है सचमुच अमृतधार ॥२॥
निज मजहब की शेखियाँ मार न सकते शेख ।
जादू है सत्यार्थ में तू भी पढ़कर देख ॥३॥
विदुर सरीखी सूझ है भूषण जैसा ओज ।
मोती है सत्यार्थ में डूब-डूब कर खोज ॥४॥
सुख विशेष ही स्वर्ग है दुख विशेष है नर्क ।
रक्त सभी का लाल है तासीरें में फर्क ॥५॥
जिसने लखा न 'नवलखा' कुछ भी लखा न यार ।
इसमें ऋषि का लखलखा नव संजीवन सार ॥६॥

दयानन्द का शिष्य तू कायरता मत धार ।
पाखण्डों के वक्ष पर कस कर भाला मार ॥७॥
पूरा विश्व सशोक है बस एकाध अशोक ।
तमस-तमीचर तब मरें रच सच का आलोक ॥८॥
दयानन्द ऋषि कर गये एक अनोखा काम ।
पाखण्डों के कंस का फिर से काम तमाम ॥९॥
किया उदयपुर में उदय फिर से वैदिक सूर्य ।
आखर-आखर मन्त्र सम पृष्ठ-पृष्ठ वैदूर्य ॥१०॥
संस्कृति को सूरज दिया चमके आठों याम ।
प्यारे ऋषि के उदयपुर बारम्बार प्रणाम ॥११॥
विष वृक्षों को एकदम जड़ से दिया उखाड़ ।
धन्य-धन्य ऋषि-लेखनी धन्य-धन्य मेवाड़ ॥१२॥

कविवर (डॉ.) सारस्वत मोहन मनीषी
दिल्ली

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ - सौरभ

प्रमुख संरक्षक – सत्यार्थ–सौरभ

महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग

नवनीत आर्य

व्यवस्थापक

सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆ भारत	विदेश
संरक्षक - ११००० रु.	$ 1000
आजीवन - १००० रु.	$ 250
पंचवर्षीय - ४०० रु.	$ 100
वार्षिक - १०० रु.	$ 25
एक प्रति - १० रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट **श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास** के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, उदयपुर खाता संख्या : ३१०१०२०१००४१५१८ IFSC CODE- UBIN 0531014 में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३११३
माघ कृष्ण द्वादशी
विक्रम संवत्
२०६९
दयानन्दाब्द
१८८

सत्यार्थ–सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

क्यों आए इस देश लाडो? ६

पशु से फीस तक २७

२१ **ब्रह्मचर्य महिमा**

वेद मन्त्रों का त्रिविध भाष्य ०४
आधिदैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक

Febuary - 2013

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर २ व ३ (भीतरी आवरण) रंगीन	३५०० रु.
अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	
पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	२००० रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	१००० रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	७५० रु.

समाचार १९
हलचल २०

१४	क्या आपने नेत्रदान किया?
१५	संस्कृत की उपेक्षा अक्षम्य अपराध
१७	स्त्री जाति का उत्थान
२३	गूँगी चीख
२४	पाखण्ड और अन्धविश्वास
२८	ईश्वर वेद और मनुष्य
२६	स्वास्थ्य
३०	बाल वाटिका
३०	दयानन्द सूक्ति संग्रह

स्वामी श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - १ अंक - ९

द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर **मुद्रण**

प्रकाशक

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) ३१३००१
(०२९४) २४१७६९४ , ९३१४५३५३७९, ९८२८९२९७४७
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

वेदभाष्य की मेरी शैली

आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

यद्यपि मैं कोई वेद भाष्य नहीं कर रहा और न ही ऐसी मेरी कोई योजना है। **मैं ऋग्वेद के ब्राह्मण ऐतरेय ब्राह्मण का वैज्ञानिक भाष्य कर रहा हूँ मुझे आशा है कि इस भाष्य से ही विश्व में वेद की वैज्ञानिकता व ईश्वरीयता सिद्ध करने का मेरा संकल्प पूर्ण हो जायेगा। इस ब्राह्मण में ऋग्वेद के सैकड़ों मंत्रों का उल्लेख है और मैं उन मंत्रों तथा ऐतरेय ब्राह्मण की कण्डिकाओं पर जिस दृष्टि से विचारता हूँ, वही दृष्टि यदि वेद भाष्य में अपनायी जाये तो वेद का क्या स्वरूप होगा, यह इस लेख से कुछ विदित हो सकेगा।**

मेरा मत है कि भगवत्पाद महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने वेद भाष्य अति संक्षेप से व सांकेतिक ही किया है। उनके सम्मुख उस समय अनेक गम्भीर समस्यायें थीं। धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, राष्ट्रिय व वैश्विक समस्याओं पर समानरूपेण श्री महाराज जी दृष्टि रखने वाले एवं सबके समाधान का मूल बतलाने वाले वे एक महान् दूरद्रष्टा ऋषि थे। वे वेद भाष्य प्रारम्भ में विस्तृत परन्तु धीरे-२ अति संक्षिप्त करते गये। सम्भवतः उन्हें अपने जीवन पर संकट की आशंका का भी अनुमान हो गया था। हमें उनके वेद भाष्य के संकेतों तथा उनकी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका की भावना को दृष्टिगत रखकर वेद भाष्य पर विचार करना चाहिए। यद्यपि यह कार्य ऋषि कोटि के विद्वान् का ही है पुनरपि मैं अपने ऐतरेय ब्राह्मण के व्याख्यान के दृष्टिकोण से वेद पर भी लेखनी चलाने का अनधिकार साहस कर रहा हूँ।

मैंने महर्षि के अतिरिक्त अन्य आर्य विद्वानों वा सायण के वेदभाष्य को भी कुछ-२ देखा है। मैं उदाहरण के लिए ऋग्वेद १०.८६.१६-१७ मंत्रों का भाष्य प्रस्तुत कर रहा हूँ। इन मंत्रों का महर्षि ने भाष्य नहीं किया था क्योंकि वे ऋग्वेद के ७.६२.२ तक ही भाष्य कर पाये थे। इन मंत्रों का भाष्य मैंने जो-२ भी देखा है, वह अत्यन्त अश्लील तो कहीं इनका भाष्य असंगत तो कहीं उन्मत्त प्रलापवत् मिलता है। मैं उन भाष्यकारों व प्रकाशकों का नाम उनके सम्मान को ध्यान में रखते हुए प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ। पाठक स्वयं अपने पास उपलब्ध किसी भी भाष्य से तुलना कर सकते हैं। मैंने पाँच भाष्यकारों का भाष्य देखा है, जिनमें से एक आचार्य सायण हैं तो अन्य चार आर्य विद्वान् हैं। इस भाष्य पर मैं प्रकाशकों व विद्वानों के समक्ष अपनी गम्भीर आपत्ति भी व्यक्त कर चुका हूँ। अब कुछ ऋषिभक्त मित्रों के आग्रह पर मैंने इसे प्रकाशित करना अति उचित समझा है। आशा है विद्वान् पाठक मेरे इस भाष्य को अन्य भाष्य से मिलाकर अपने विवेक से निर्णय करेंगे। ये दो मंत्र हैं-

1. न सेशे यस्य रम्बतेऽन्तरा सक्थ्या३ कपृत्।
सेदीशे यस्य रोमशं निषेदुषो विजृम्भते विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः॥
ऋग्वेद १०.८६.१६॥

2. न सेशे यस्य रोमशं निषेदुषो विजृम्भते।
सेदीशे यस्य रम्बतेऽन्तरा सक्थ्या३ कपृद्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः॥
ऋग्वेद १०.८६.१७॥

मेरी भूमिका व इन मन्त्रों की पृष्ठभूमि- मेरी दृष्टि में वेद उन छन्दों का समूह है जो सृष्टि प्रक्रिया में कम्पन के रूप में समय-२ पर उत्पन्न होते हैं। विभिन्न प्रकार के छन्द विभिन्न प्रकार के प्राण होते हैं, जिनकी उत्पत्ति के कारण ही व जिनके विकृत होने से अग्नि, वायु आदि सभी तत्त्वों का निर्माण होता है। सूर्य, तारे, पृथिव्यादि सभी लोक इन छन्द प्राणों के ही विकार हैं। सृष्टि प्रक्रिया में उत्पन्न विभिन्न छन्द vibration के रूप में इस समय भी सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। इन्हीं प्राणों को अग्नि आदि चार ऋषियों ने सृष्टि की आदि में सविचार सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था में ईश्वरीय कृपा से ग्रहण किया था और फिर ईश्वरीय

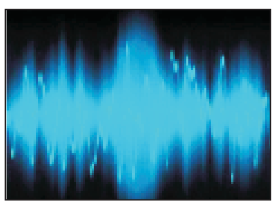

कृपा से ही उनके अर्थ का भी साक्षात् किया था। **यही वेदोत्पत्ति की वैज्ञानिक प्रक्रिया है।** वेद मन्त्रों के ऊपर उल्लिखित विभिन्न ऋषि जहाँ उपकार स्मरणार्थ उन मानव ऋषियों के नाम हैं, जिन्होंने अग्नि आदि ऋषियों के पश्चात् सर्वप्रथम उस-उस मन्त्र का अर्थ साक्षात् करके संसार में प्रचार-प्रसार किया था, वहीं वे ऋषि सृष्टि में सूक्ष्म प्राण के रूप में उस समय जन्मे थे, जब उस छन्द रूपी प्राण

(मंत्र) की उत्पत्ति सर्गप्रक्रिया में हुई थी। आज भी वे ऋषि रूपी सूक्ष्म प्राण इस बह्माण्ड में व्याप्त हैं, जबकि ऐतिहासिक मानव ऋषि अब नहीं रहे। वेद का अर्थ करने में ऐतिहासिक मानव ऋषि के ज्ञान की आवश्यकता नहीं परन्तु देवता का ज्ञान होना अनिवार्य है। हाँ, उस वेद मन्त्र का सृष्टि प्रक्रिया पर क्या प्रभाव होता है, यह जानने हेतु देवता के साथ ऋषि व छन्द का ज्ञान भी अनिवार्य होता है। इस सृष्टि के अनुसार इन दो मन्त्रों की पृष्ठभूमि लिखते हैं। इन ऋक् अर्थात् प्राणों की उत्पत्ति वृषाकपिइन्द्र व उसकी शक्ति से हुआ करती है। इसका तात्पर्य है कि विद्युद्वायु युक्त तीव्र बलवान् सूर्य लोक के भीतरी भाग में स्थित इन प्राथमिक ऋषि प्राणों से इन दो मन्त्र रूपी प्राणों (छन्दों) की उत्पत्ति होती है। इनके उद्गम ऋषि प्राण बहुत बलवान् होने से इन प्राण छन्दों में भी बहुत बल होता है अर्थात् बलों को उत्पन्न करने वाले होते हैं। इनका देवता इन्द्र है। इसका तात्पर्य है कि इन ऋक् प्राणों (मन्त्रों) के द्वारा सूर्य के मध्य विभिन्न विद्युद् बलों की उत्पत्ति होती है तथा इन मन्त्रों में सूर्य का ही वर्णन है। इनका छन्द निचृत् पंक्ति छन्द है। इनके छान्दस प्रभाव से सूर्य के बहिर्भाग से विभिन्न परमाणुओं को सूर्य के केन्द्रीय भाग में ले जाया जाता है और ऐसा करते हुए बाहरी व आन्तरिक भाग में भारी क्षोभ उत्पन्न होता है। परस्पर संघर्षण, टकराव होते हुए समृद्ध होते हुए एक दूसरे को अपने बन्धन बलों द्वारा बाँधने का कार्य होता है।

अत्र प्रमाणानि :-

१.**आधिदैविक पक्ष में - इन्द्र :** = कालविभागकर्त्ता सूर्यलोकः (भाष्य ऋग्वेद १.१५.१), विद्युदाख्यो भौतिकाऽग्निः (भाष्य ऋग्वेद १.१६.३), महाबलवान् वायुः (महर्षि कृत भाष्य ऋग्वेद १.७.१), **इन्द्राणी** = इन्द्रस्य सूर्यस्य वायोर्वा शक्तिः (भाष्य ऋग्वेद १.२२.१२)। वृषाः = वीर्यकारी (भाष्य ऋग्वेद ३.२.११), वेगवान् (भाष्य ऋग्वेद २.१६.६), परशक्तिबन्धकः (भाष्य यजुर्वेद २.१६), **वृषाकपिः** = वृषा चाऽसौकपिः। **कपिः** = कम्पतेऽसौ (उणादि कोशः), आदित्यः (गोपथ ब्राह्मण)। **कपृत्** = क+पृत्, 'पदादिषु मांस्पृत्स्नूनामुपसंख्यानम्' (वा. अष्टाध्यायी ६.१.६३) से पृतना को पृत् आदेश। **पृतना** = सेना (आप्टे शब्दकोश) संग्रामः (महर्षि दयानन्दः), **कः** = प्राणः (प्राणो वाव कः - जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण)। **सक्थिः** = सजतीति (उणादि कोशः), **षंज संगे** = आलिंगन करना, सटे रहना, सक्थिक्यां क्रौञ्चौ (अजायेताम्) (जै. २.२६७), **क्रौञ्चः** = रज्जुः (तां. ब्रा.), **रज्जुः** = रश्मिः, अत्र प्रमाणानि-रश्मयः = रज्जवः किरणा वा (भाष्य यजुर्वेद २६.४२), **रश्मेव** = (रश्मा + इव) = किरणवद् रज्जुवद् वा (भाष्य ऋग्वेद ६.६७.१), प्राणाः रश्मयः (तै.सं.)। **रोमशः** = लोमशः (रेफस्य लत्वम्), **लोमाः** = छन्दांसि (शतपथ ब्रा.), पशवः (तां.ब्रा.), **प्राणा** = छन्दांसि (मै. ३.१.६)। **रम्बते** = लम्बते (रेफस्य लत्वम्) क्वचित् रम्बते भी रहेगा। **निषेदुः** = निषण्णाः (निरुक्त १३.१०), नितरां दृढ़स्थित, विश्रान्त, नतमुख, खिन्न, कष्टग्रस्त। **ऋषयः** = ज्ञापकाः प्राणाः (भाष्य यजुर्वेद १५.११), प्रापका वायवः (भाष्य यजुर्वेद १५.१०), बलवन्तः प्राणाः (भाष्य यजुर्वेद १५.१३), प्राणा वा ऋषयः (ऐतरेय ब्रा., शतपथ ब्रा.), धनञ्जयादयः सूक्ष्मस्थूल वायवः प्राणाः (भाष्य यजुर्वेद १५.१४)।

२.**आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक पक्ष में- इन्द्रः** = राजा (भाष्य ऋग्वेद ६.२६.६), विद्वन्मनुष्यः (भाष्य यजुर्वेद २६.४), जीवः (भाष्य ऋग्वेद ३.३२.१०)। **कपृत्** = कम् सुखनाम (निघण्टु), अन्ननाम(निघण्टु), उदकनाम (निघण्टु), सुखस्वरूपःपरमेश्वरः (भाष्य यजुर्वेद ५.१८)। **पृत्** = संग्रामनाम (निघंटु), **सेना** = सिन्वन्ति बध्नन्ति शत्रून् याभिस्ताः (भाष्य यजुर्वेद १७.३३), **बलम्** = (भाष्य ऋग्वेद २.३३.११), सेश्वरा समानगतिर्वा (निरुक्त २.११)। **क्रौञ्चम्** = वाक् (तां.), **रश्मिः** = ज्योतिः, यमनात् (निरुक्त २.१५), अन्नम् (शत.), विश्वेदेवाः (शत.), **देवः** = धनं कामयमानः (भाष्य ऋग्वेद ७.१.२५)। **लोम**= अनुकूलवचनम् (भाष्य यजुर्वेद २३.३६), रोमा रोमाणि औषध्यादीनि (भाष्य ऋग्वेद १.६५.४)।

सूचनाः- यहाँ सभी प्रमाण महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के वेद भाष्य से ही लिए गये हैं।

आधिदैविक भाष्य :-

१.जब सूर्य के अन्दर (कपृत्) विभिन्न प्रकार के प्राणों की सेना अर्थात् धारा stream एवं उनका

संघर्षण interaction उस सूर्य की (अन्तरा सक्थ्याः) सूर्य के केन्द्रीय व बहिर्भाग को जोड़ने वाले उत्तरी व दक्षिणी दृढ़ भागों जिनसे विभिन्न प्रकार के विकिरणों व प्राणों vibration की धारायें streams उत्पन्न होती रहती हैं, के बीच (रम्बते = लम्बते) पिछड़ कर ठहर सी जाती हैं अथवा फैलकर मन्द पड़ जाती हैं। उस समय (न स ईशे) वह इन्द्रतत्व अर्थात् सूर्य में स्थित बलवान् वैद्युत वायु समस्त सूर्य किंवा दोनों भागों के बीच की गति व संगति में तालमेल-सामंजस्य रखने में असमर्थ हो जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि सूर्य के दोनों भागों अर्थात् नाभिकीय संलयन युक्त केन्द्रीय भाग जिसमें सतत अपार ऊर्जा उत्पन्न होती रहती है, जिसे सूर्य की भट्टी कह सकते हैं एवं बहिर्भाग की जो पृथक्-२ घूर्णन गति होती है और दोनों के मध्य जो एक ऐसा संधि क्षेत्र होता है, जिसके सिरे उत्तरी व दक्षिणी ध्रुव की ओर होते हैं, के बीच सन्तुलन खोने लगता है। इस कारण समस्त सूर्य पर संकट आ सकता है। अब इसी मंत्र में आगे कहते हैं कि ऐसी अनिष्ट स्थिति कब नहीं बनती और कब यह सूर्य सन्तुलित व अनुकूलन की स्थिति में होता है? (यस्य निषेदुषः) जिस निरंतर दृढ़ तेजस्वी उपर्युक्त इन्द्र के प्राणों की सेना अर्थात् vibrations की streams (रोमशम् = लोमशम्) विभिन्न छन्द रूपी प्राणों तथा मरुत् अर्थात् सूक्ष्म पवनों से अच्छी प्रकार सम्पन्न होकर (विजृम्भते) विशेष रूपेण जागकर अर्थात् सक्रिय होकर अपने बल व तेज से सम्पन्न होती है, (स इत् ईशे) तब यह इन्द्र अर्थात् विद्युदग्नियुक्त वायु सूर्य के दोनों भागों की गति व स्थिति को नियंत्रण में रखने में समर्थ होता है। यह प्राण सेना stream उपर्युक्त सक्थि अर्थात् सूर्य के दोनों भागों को मिलाने वाले उत्तरी व दक्षिणी ध्रुवों की ओर स्थित संधि भागस्थ दृढ़ भागों के बीच ही उत्पन्न व सक्रिय होती है। (विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः) यह इन्द्र तत्व अर्थात् विद्युदग्नियुक्त तेजस्वी बलवान् वायु अन्य

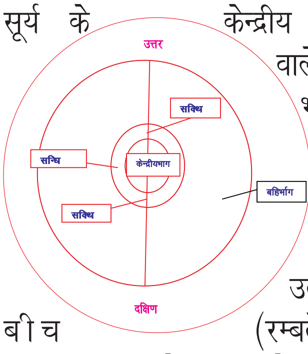

तेजस्वी पदार्थों की अपेक्षा उत्कृष्ट व बलवत्तम है। यही बलपति है तथा सृष्टि यज्ञ को उत्कृष्टता से तारने वाला है। (भाष्य ऋग्वेद १०.८६.१६)

भावार्थ :- जब सूर्य के केन्द्रीय भाग व बहिर्भाग को जोड़ने वाली दृढ़ स्तम्भरूपी उत्तरी व दक्षिणी प्राण धारायें मन्द हो जाती हैं, तब सूर्य के दोनों भागों में संतुलन खोकर सूर्य का अस्तित्व संकटग्रस्त हो सकता है और जब वे दोनों धारायें विशेषरूप से सक्रिय व सशक्त होती हैं, तब सूर्य का सन्तुलन उचित प्रकार से बना रहता है।

२.जब सूर्य के अन्दर (कपृत्) विद्युदग्नियुक्त वायु के विभिन्न प्राणों की सेना stream उसके (अन्तरा सक्थ्याः) सूर्य के केन्द्रीय व बहिर्भाग के मध्य स्थित उनको जोड़ने वाले उत्तरी व दक्षिणी दृढ़ भागों जिनमें विभिन्न प्रकार के प्राणों vibration की धारायें उत्पन्न होती रहती हैं, के बीच (रम्बते = लम्बते) चिपककर, उनको अपने नियंत्रण में लेकर ऊपरी भाग को ऊपर ही लटकाने, धारण करने में समर्थ होती है, तब (स इत् ईशे) वैद्युत अग्नियुक्त वायु रूपी इन्द्र इन्हें अर्थात् सूर्य के दोनों भागों को सन्तुलित रखने में समर्थ होता है अर्थात् उस समय सूर्य का बहिर्भाग उसके केन्द्रीय भाग जिसमें नाभिकीय संलयन की प्रक्रिया सतत चलती है, के ऊपर सन्तुलन बनाये रखते हुए सतत फिसलता रहता है परन्तु यदि (रोमशम् = लोमशम्) प्रशस्त बलयुक्त छन्द प्राण vibrations व मरुत् अर्थात् सूक्ष्म पवन (विजृम्भते) खुलकर फैल जाते हैं, जिससे उनका प्रभाव मंद पड़ जाता है। जैसे किसी पानी की धारा को जब तीव्र दाब से फैंका जाता है तो उसमें भारक क्षमता तेज होती है। वह पत्थर को भी छेद सकती है, किसी प्राणी को मार सकती है परन्तु जब वही धारा बड़े छिद्र में से प्रवाहित कर दी जाये तो वह खुलकर फैल जायेगी और उसका मारक वा छेदक प्रभाव मंद वा बंद पड़ जाता है।

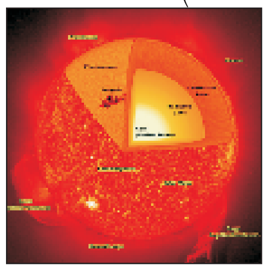

उसी मंदता की यहाँ चर्चा है। (न स ईशे) उस समय वह

इन्द्र तत्व अर्थात् विद्युदग्नियुक्त वायु सूर्य के उन दोनों मार्गों पर सन्तुलन-सामंजस्य खो सकता है, जिससे सूर्य का अस्तित्व संकट में पड़ सकता है। (विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः) यह इन्द्र तत्व ही अखिल उत्पन्न पदार्थ समूहरूपी संसार में सबसे श्रेष्ठतम व बलवत्तम है तथा यह समस्त अन्न अर्थात् संयोज्य परमाणुओं को उत्कृष्टता से तारते हुए जगद्रचना में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(भाष्य ऋग्वेद १०.८६.१७)

भावार्थ :- जब सूर्य के केन्द्रीय व बहिर्भाग के बीच प्रवाहित उत्तरी व दक्षिणी प्राण धारायें तीव्र बलवती होती हैं, तब दोनों भागों के बीच की गति व अवकाश का सन्तुलन व सामंजस्य बना रहता है परन्तु जब वे धारायें इधर उधर बिखर कर दुर्बल हो जाती हैं तब दोनों भागों के मध्य असंतुलन उत्पन्न होकर सूर्य के अस्तित्व पर संकट आ सकता है।

आधिभौतिक भाष्य :-

१. (यस्य) जिस राजा का (कपृत्) सेनाबल अथवा उसका अन्नधन का भण्डार (सक्थ्याः) (अन्तरा) सभी विद्वानों वा धन की कामना करने वाले प्रजाजनों के मध्य उभरते रागद्वेषरूप संघर्ष के मध्य (रम्बते) पिछड़ जाता है अथवा उनकी विशेष आसक्ति का कारण बन जाता है। (स न ईशे) वह ऐश्वर्यहीन राजा अपने देशवासियों पर शासन नहीं कर सकता है अर्थात् उसके राष्ट्र में अराजकता उत्पन्न हो जाती है परन्तु (निषेदुषः) निरन्तर स्थिरता में आश्रित जिस राजा का

सेनाबल अथवा अन्नधन संसाधन (रोमशम्) जब प्रशस्तरूपेण सब प्रजाजनों के लिए अनुकूल वचनयुक्त एवं प्रचुर औषधि, पशु आदि से सम्पन्न होता है तथा (विजृम्भते) सब प्रजाजनों के लिए यथायोग्य रीति से वितरित किया जाता है तथा यह वितरण व्यवस्था सदा सुचारु रूपेण चलती रहती है, (स इत् ईशे) वही राजा अपने राष्ट्र पर सब ऐश्वर्यों से युक्त होकर शासन कर सकता है। (विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः) वह ऐसे समग्र ऐश्वर्य

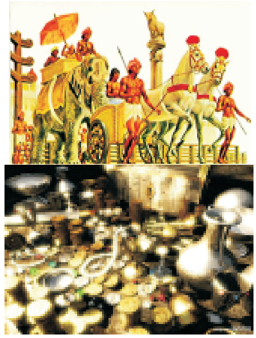

सम्पन्न राजा का शासन अन्य सभी व्यवस्थाओं से श्रेष्ठ होता है। (भाष्य ऋग्वेद १०.८६.१६)

भावार्थ :- राजा को चाहिए कि वह सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए अनुकूल वचनों से युक्त होकर अपनी प्रजा के मध्य पनप रहे रागद्वेषजन्य असन्तोष एवं संघर्ष को दूर करने का सतत प्रयत्न करे, साथ ही अपने बल व धन का सम्पूर्ण प्रजा के हित में यथायोग्य नियोजन करे।

१. (यस्य) (निषेदुषः) जिस विश्रान्त एवं कष्टग्रस्त राजा का (रोमशम्) प्रशस्त अन्न औषधि व पश्वादि संसाधन (विजृम्भते) अव्यवस्थितरूपेण खुला रहता है अर्थात् जिसके राज्य में अपव्ययता व वितरण की अव्यवस्था होती है। (न स ईशे) वह ऐश्वर्यहीन राजा अपने राष्ट्र पर शासन करने में समर्थ नहीं होता है। (स इत् ईशे) वही राजा

ऐश्वर्यवान् होकर अपने राष्ट्र पर समुचित रीति से शासन कर सकता है (यस्य कपृत्) जिसका सेनाबल तथा अन्नधन भण्डार (सक्थ्या अन्तरा) सभी विद्वानों व प्रजाजनों के मध्य उत्पन्न रागद्वेषजन्य संघर्ष के मध्य (रम्बते) उस रागद्वेष की भावना को हराकर अर्थात् दूरकर प्रजाजनों को उससे ऊपर उठाता है। फिर वह राजा सभी प्रजाजनों में उस बल व धनादि पालन सामग्री का दृढ़ता से यथायोग्य वितरण करता हुआ अपने पालन कर्म से सभी प्रजाजनों के हृदय में बस जाता है। (विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः) ऐसा ऐश्वर्यवान् राजा अपने प्रजाजनों को अपने अन्नादि पदार्थों के द्वारा सर्व दुःखों से तारने वाला होता है।

(भाष्य ऋग्वेद १०.८६.१७)

भावार्थ :- ऐश्वर्य के इच्छुक राजा को चाहिए कि वह अपने राष्ट्र को बाहरी आक्रमणादि कष्टों से सुरक्षित रखते हुए पूर्ण पुरुषार्थ के साथ अपने अन्न-धन आदि

पालन सामग्री का अपव्यय वा अव्यवस्थित वितरण कदापि न होने दे बल्कि अपने प्रजाजनों के अन्दर पनप रहे रागद्वेषजन्य असन्तोष एवं संघर्ष को उचित पालनादि क्रियाओं व आवश्यक होने पर उचित दण्ड का आश्रय लेकर दूर करके सबका हित करने की सदैव चेष्टा करता रहे, जिससे वह सबका पितृवत् प्रिय बना रहे।

आध्यात्मिक भाष्य :-

१. (यस्य) जिस विद्वान् पुरुष का (कपृत्) मन एवं सुखकारी प्राणों का समूह (सक्थ्या अन्तरा) रागद्वेषादि द्वन्द्वों में आसक्ति एवं कोलाहल के मध्य (रम्बते) चिपकाया रहता है अर्थात् उन्हीं में रत रहता है, (न स ईशे) वह अपनी इन्द्रियों पर शासन नहीं कर सकता, बल्कि (यस्य निषेदुषः रोमशम्) दृढ़ व ब्रह्मवर्चस् से तेजस्वी होकर अपने अन्तः करण को प्रणव तथा गायत्र्यादि छन्दरूप वेद की पवित्र ऋचाओं में प्रशस्त रूप से रमण करते हुए (विजृम्भते) स्वयं को परमपिता सुखस्वरूप परमेश्वर के आनन्द में विस्तृत कर देता है (स इत् ईशे) वही योगी पुरुष अपनी इन्द्रियों पर शासन कर पाता है। (विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः) ऐसा जितेन्द्रिय विद्वान् अन्य प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ होता है। (भाष्य ऋग्वेद १०.८६.१६)

भावार्थ :- विद्वान् पुरुष को चाहिए कि अपने को योगयुक्त करके परमपिता परमात्मा में रमण करने के लिए अपने अन्तःकरण को रागद्वेषादि द्वन्द्वों से हटाकर प्रणव तथा गायत्र्यादि ऋचाओं के विधिपूर्वक जप द्वारा परमेश्वर की उपासना करने हेतु अपनी इन्द्रियों पर जय प्राप्त करे।

२. (यस्य निषेदुषः रोमशम्) जिस निरन्तर विश्रान्त व खिन्न रहते हुए विद्वान् पुरुष का अन्तःकरण विभिन्न गायत्र्यादि ऋचाओं का जप करते समय अर्थात् उपासना का अभ्यास करते समय (विजृम्भते) इधर उधर फैलने लगता है अर्थात् अस्थिर होकर इधर उधर भागता है, (न स ईशे) वह विद्वान् अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने में समर्थ नहीं होता है, बल्कि (यस्य कपृत्) जिसका मन तथा सुखकारी प्राण समूह (सक्थ्या अन्तरा) विभिन्न द्वन्द्वों तथा सांसारिक व्यवहार के बीच (रम्बते) स्थिर होकर तपता हुआ एक स्थान पर दृढ़ रहता हुआ निरन्तर परमेश्वर के जप में संलग्न रहता है, (स इत् ईशे) वही विद्वान् योगी बनकर अपनी इन्द्रियों पर शासन करके समग्र ऐश्वर्य को प्राप्त करता है। (विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः) ऐसा योगी स्वयं को सब दुःखों से तारकर अन्य प्राणियों को भी दुःखों से तारने वाला होता है। (भाष्य ऋग्वेद १०.८६.१७)

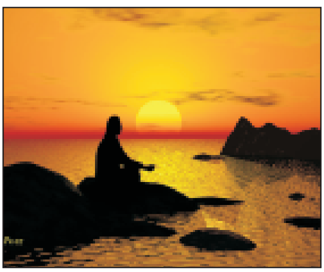

भावार्थ :- मुमुक्षु विद्वान् पुरुष को चाहिए कि ईश्वरोपासना वा जप करते समय मन को एकाग्र करके निरन्तर परमेश्वर में मग्न रहे तथा ऐसा करते हुए अपने सम्पूर्ण द्वन्द्वों को जीतकर स्वयं मोक्ष को प्राप्त करके दूसरे प्राणियों को भी दुःखों से दूर करने का प्रयत्न करता रहे।

– चलभाष– 09549110801
भागलभीम, भीनमाल

❑❑❑

वर्तमान ग्राहकों के लिए रियायती योजना

आपकी सदस्यता को यदि आप पंचवर्षीय सदस्यता में परिवर्तित करते हैं तो चार सौ की बजाय केवल तीन सौ रु. भेज दें तो आपको पंचवर्षीय सदस्य में नामित कर लिया जायेगा। इसी प्रकार अगर आप आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं तो बजाय एक हजार रु. के मात्र नौ सौ रु. प्रेषित करने का श्रम करें तो आपको आजीवन सदस्यता सूची में सम्मिलित कर लिया जायेगा।

कर्मयोगी महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष - न्यास

सुख की सरिता बहे हमेशा,
हर्षित रहे हमेशा मन।
नई मंजिलें गले लगायें,
खिला रहे जीवन का उपवन॥

सत्यार्थ-सौरभ
घर-घर पहुँचावें

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

* न्यास द्वारा ON LINE TEST प्रारम्भ।
* वर्ष में तीन बार दिया जावेगा ५१०० रु. का उपरोक्त पुरस्कार।
* आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
* विश्व भर के लोगों से इस ON LINE TEST में भाग लेने का अनुरोध।

बेवसाइट - www.satyarthprakashnyas.org

क्यों आए इस देश में लाडो?

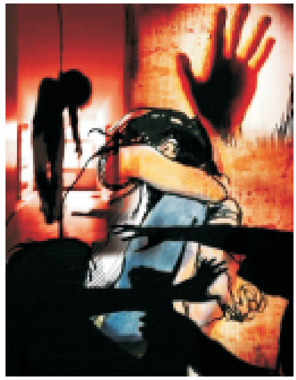

आखिर देश का गुस्सा फूट पड़ा। और क्यों न फूटे ऐसे बर्बर काण्ड पर?इस गुस्से को, 'दामिनी' के बलिदान को व्यर्थ नहीं जाने देना है। इस आक्रोश को एक सकारात्मक दिशा देनी है। आज समाज शास्त्रियों, चिन्तकों, मनीषियों, राजनेताओं सभी को दिखावटी या सामयिक उपचार के रूप में नहीं वरन् आत्म चेतना से जुड़कर यह गम्भीर चिन्तन करना होगा कि ऐसा क्या किया जाय कि जिससे ऐसे बर्बर काण्डों की पुनरावृत्ति न हो। जब सारा देश उबल रहा है तो क्या इन दिनों में भी बर्बरता रुकी है?नहीं। क्यों? क्यों हमारे समाज का चेहरा ऐसा हो गया है कि इसमें आँखे खोलने वाली हर मासूम निगाह प्रश्न कर रही है कि **'क्यों आए देश में लाडो?'**कोख से लेकर सम्पूर्ण जीवन आशंकित रहने के लिए?नारी होने का अभिशाप झेलने के लिए?जो देश जो समाज उसके जीवन की, उसकी प्रतिष्ठा की गारण्टी नहीं दे सकता उसकी सदस्या वह क्यों बने?

यहाँ यह भी एक प्रश्न मन में मचलता है कि माना कन्या-भ्रूण-हत्या निरी दानवता है पर उन माता-पिताओं के दिल से पूछो कि जिनकी बेटियों ने उस दंश को सहा है। तिल-तिल मर रहे ये माता-पिता और उनकी दशा देखकर अन्य माता-पिता क्या चाहेंगे कि उनके घर लाडो पैदा हो? जहाँ ४-५ वर्ष की अबोध बालिकाओं को दरिन्दगी झेलनी पड़ी है, क्या उस वातावरण में हम माता-पिताओं को जिनके कि बेटियाँ ही हैं, गारण्टी दे सकते हैं कि बेटी नहीं है तो क्या है, उनकी बेटी तो बेटा है, वह भी बेटे की भाँति निर्भय होकर बाजार जाकर घर का सामान खरीद कर ले आ सकती है?

महाराज मनु कहते हैं कि स्त्रियाँ पूजनीय हैं, भाग्यशालिनी हैं, पवित्र हैं, घर का प्रकाश और गृहलक्ष्मी हैं, उनकी रक्षा विशेष प्रयत्न से करनी योग्य है। पर आज ठीक विपरीत स्थिति हमारे समक्ष है। 'लाडो' को हम यदि लाना चाहते हैं तो भय-मुक्त, आशंका-मुक्त समाज की गारण्टी हमें देनी ही होगी। सत्ता संवेदनहीन कानून निर्माण का नहीं वरन् कर्त्तव्यबोध का नाम है। शीर्ष पर जो बैठे हैं वे तब तक न्याय नहीं कर पाएँगे जब तक वे यह सोच कर काँप नहीं जाते कि ऐसा अगर उनकी बेटी के साथ होता तो?

अब प्रश्न उठता है कि ऐसे समाज का निर्माण कैसे हो?इसके तीन सोपान हैं- रचनात्मक, रक्षात्मक तथा दण्डात्मक ।इनमें रचनात्मक ही सर्वश्रेष्ठ व अन्तिम उपाय है बाकी सामायिक हैं।

(१) रचनात्मक- पशु-समाज नैसर्गिक वृत्ति से संचालित होता है। उसका अतिक्रमण उसके वश में नहीं है। परन्तु मनुष्य के साथ ऐसा नहीं है। धर्म अर्थात् कर्त्तव्य का पालन कर सकना उसकी सबसे बड़ी विशेषता है और 'विवेक' इसमें उसका सहायक है। इसीलिए नीतिकार कहता है-

आहार, निद्रा, भय, मैथुन तो पशुओं और मनुष्यों में समान ही है। फिर मनुष्य विशेष क्यों? केवल 'धर्म' ही वह तत्व है जो मनुष्यों में विशेष होने से इसे पशुओं से अलग करता है।

नीतिकार ने धर्म से विहीन मनुष्य को पशु के समान माना है। आप मुझे कहने दीजिए कि धर्म से विहीन मनुष्य पशु से निकृष्ट होता है। क्योंकि नैसर्गिक दस्तक पशु को प्रेरित करती है तदनुरूप वह व्यवहार करता है। उदाहरण के लिए पशु ऋतुकाल में ही काम के अधीन होते हैं। पर मनुष्य किसी के नियन्त्रण में नहीं है। वह दोनों दिशाओं में किसी भी Extreme तक जा सकता है। आपने देखा होगा कि अनेक लोग सप्ताह महीनों तक पूर्ण उपवास करते हैं, तो खा-खाकर मरने वाले भी मनुष्य आपने देखे-सुने होंगे। एक ताजा अध्ययन तो यहाँ तक कहता है कि कुपोषण से मरने वालों से अधिक खाकर मरने वालों की संख्या ज्यादा है। जहाँ तक निद्रा का प्रश्न है दिन भर सोते आलसियों के साथ, केवल आवश्यक निद्रा के पश्चात् प्रातः ब्रह्ममुहूर्त्त से ही पुरुषार्थ में रत् व्यक्ति देखे जा सकते हैं। भयभीत, आशंकित लोगों की भीड़ में कम ही सही परन्तु सर्वथा निर्भय, लोकोपकार के लिए हँसकर मृत्यु-आलिंगन करने वाले भी प्रत्यक्ष हैं। यद्यपि काम मनुष्य का सबसे प्रबल शत्रु है। जिसको वश में करना सर्वाधिक दुष्कर कार्य है, पुनश्च महर्षि दयानन्द सदृश महापुरुषों की पंक्ति भी हमारे समक्ष है जिन्होंने काम को अपने समक्ष फटकने भी नहीं दिया।

संक्षेप में कहें तो राष्ट्र चाहे, समाज चाहे, परिवार चाहे तो जैसा चाहे वैसा मनुष्य निर्मित किया जा सकता है। वेद माता तभी आदेशित करती है- **'मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्'**- मनुष्य बनो और मनुष्यता के दिव्य गुणों से युक्त सन्तानों का निर्माण करो।

दिव्य गुण से युक्त सन्तान कैसी होगी इसके दर्शन महर्षि दयानन्द की दी हुई मनुष्य की परिभाषा में कर सकते हैं-

१. वह प्रत्येक कार्य मनन पूर्वक करेगा। अर्थात् उचित-अनुचित, सत्य-असत्य तथा परिणाम की श्रेष्ठता-अश्रेष्ठता पर विचार पूर्वक करेगा।

२. अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को स्वात्मवत् समझेगा।

३. अन्यायकारी का पूरी ताकत व सामर्थ्य से विरोध करेगा चाहे वह कितना ही बलशाली, प्रभावशाली क्यों न हो।

४. जो धर्मात्माजन हैं न्याय के पथ पर हैं चाहे वे निर्बल व सामर्थ्यहीन क्यों न हों, उनका सर्वसामर्थ्य से सहाय करेगा।

५. उपरोक्त मनुष्यरूपी धर्म के निर्वहन में चाहे उसे कितना भी कष्ट क्यों न हो, मृत्यु-भय भी क्यों न आवे वह अपने इस श्रेष्ठ मार्ग से विरत् नहीं होगा।

आप सोचें कि उपरोक्त मनुष्य किञ्चित् मात्र अधर्म भी नहीं करेगा। अब प्रश्न यह है कि क्या उपरोक्त वर्णित मनुष्य-निर्माण सम्भव है? तो उत्तर है-हाँ। भारतीय संस्कृति उपरोक्त मनुष्य-निर्माण के लिए अत्यन्त उर्वरा सिद्ध हुयी है। राम, कृष्ण, दयानन्द, विवेकानन्द, महावीर, बुद्ध आदि महामना जीवन्त उदाहरण हैं। आप कहेंगे कि ये तो अंगुलियों पर गिने जा सकने वाले नाम है तो राष्ट्र-रक्षा में अनगिनत सपूतों द्वारा दी गई शहादत को स्मरण कर लें। कुछ लोगों की बात तो क्या यहाँ का जन-सामान्य भी ऐसा ही था। तभी तो सम्राट् अश्वपति घोषणा कर सके थे- 'मेरे राज्य में कोई चोर नहीं, कोई व्यसनी नहीं, कोई ऐसा नहीं जो यज्ञ न करता हो, कोई व्यभिचारी नहीं तो किसी स्त्री के व्यभिचारिणी होने का तो प्रश्न ही नहीं।'

'परद्रव्येषु लोष्ठवत्' की भावना यहाँ की माटी में रची बसी थी। चीनी यात्री फाह्यान ने लिखा है कि उसने भारत में घरों में ताले नही लगे देखे।

२ फरवरी १८३५ को ब्रिटेन की संसद में मैकाले के भारत के प्रति विचार और योजना मैकाले के शब्दों में-

'मैं भारत के कोने कोने में घूमा हूँ। मुझे एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं दिखाई दिया, जो भिखारी हो ,जो चोर हो, इस देश में मैंने इतनी धन दौलत देखी है, इतने ऊँचे चारित्रिक आदर्श और इतने गुणवान मनुष्य देखे हैं, कि मैं नहीं समझता कि हम कभी भी इस देश को जीत पाएँगे, जब तक इसकी रीढ की हड्डी को नहीं तोड देते जो इसकी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत है और इसलिए मैं ये प्रस्ताव रखता हूँ कि हम इसकी पुराणी और पुरातन शिक्षा व्यवस्था, उसकी संस्कृति को बदल डालें, क्यूँकि अगर भारतीय सोचने लग गए कि जो भी विदेशी और अंग्रेजी है वह अच्छा है, और उनकी अपनी चीजों से बेहतर है, तो वे अपने आत्मगौरव और अपनी ही संस्कृति को भुलाने लगेंगे और वैसे बन जाएंगे जैसा हम चाहते हैं। एक पूर्णरूप से गुलाम भारत।

प्रश्न यह है कि फिर हम इतने बर्बर कैसे हो गये? उत्तर मैकाले के उपरोक्त कथन में छिपा है कि मनुष्य निर्माण की आवश्यकता को सिरे से भूल जाने के कारण। हमने स्कूल-कॉलेज खोले-प्रत्येक क्षेत्र में सराहनीय उपलब्धियाँ प्राप्त कीं, पर हमारे नागरिकों के नैतिक उत्थान पर ध्यान नहीं दिया।

वेद माँ ने हमें मानव-निर्माण का राजपथ दिखाया है-

उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र ।। (अर्थव. ८/४/२२)

काम, क्रोध, अभिमान, लोभ, मोह जैसे विकार मनुष्यत्व प्राप्ति में बाधक हैं अतएव वेद भगवान आज्ञा देते हैं- उनको दृढ़तापूर्वक कुचल डाल।

आधुनिक प्रगतिशील कहे जाने वाले लोग इससे सहमत नहीं हो सकते हैं पर यह ध्रुव सत्य है कि जैसा परिवेश होगा, वैसे ही संस्कार बालक-बालिका पर पड़ेंगे। हम वैदिक दर्शन के स्थान पर चारवाक्-विचारधारा को स्थापित कर उदात्त, उच्चतम नैतिक मूल्यों की स्थापना करना चाहते हैं तो यह खामख्याली है, दिवा स्वप्न है।

'मन को पिंजरे में मत डालो, मन का कहना मत टालो,
मन तो है एक उड़ता पंछी जितना उड़े उड़ालो।'

वाली विचारधारा का बीजवपन करेंगे तो फलस्वरूप जो पौध प्राप्त होगी उसमें दसवीं कक्षा के छात्र-छात्राएँ अश्लील एम.एम.एस बना प्रसारित करेंगे तो आश्चर्य ही क्या? नैतिकता का बन्धन नहीं, समाज तथा लोक-लाज की बातें रूढ़िवादी तो फिर प्रसिद्ध पत्रिका 'इण्डिया टूडे' के सर्वेक्षण (छात्र-छात्राओं के मध्य उन्मुक्त सम्बन्धों के बारे में) के अत्यन्त विस्मित कर देने वाले परिणामों को किस आधार पर दरकिनार करेंगे?क्या वास्तव में आज के माता-पिता को इस बात की परवाह नहीं कि उनके बेटे-बेटी भी उक्त सर्वेक्षण के एक पात्र हैं या नहीं? या कबूतर की तरह आँख बन्द कर लेना ही हमने नियति मान ली है।

इस आलेख को लिखते-लिखते घटी कुछ ऐसी ही बर्बर घटनाएँ- लखनऊ- ४ जनवरी - १५ वर्षीया बच्ची के साथ गैंगरेप, दिल्ली- ६ जनवरी- १५ वर्षीया बालिका जो कि नवीं कक्षा की छात्रा थी, के साथ दो व्यक्तियों द्वारा बलात्कार, आठ वर्षीया बच्ची के साथ बलात्कार तथा पत्थर मार-मारकर नृशंस हत्या। (राजसमन्द- १८ फरवरी १३)

बलात्कार को केवल पुरुष मानसिकता का ही परिणाम मान लेने वाली धाराएँ बाँसवाड़ा (राजस्थान) के त्रिकोण प्रेम प्रसंग के चलते छात्राओं द्वारा ही छात्रा को जलाकर लोमहर्षक तरीके से मार देने को किस प्रकार व्याख्यायित करेंगी? यह भी ध्यान

रखें कि ये छात्राएँ केवल ११ वीं कक्षा की थीं। तो फिर? **रास्ता लम्बा है, रास्ता कठिन है, रास्ता समाज की आज की धारा के विपरीत भी है पर 'कुप्रवृत्तियों पर कठोर नियंत्रण' स्थापना के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। 'ब्रह्मचर्य' शब्द को डिक्शनरी से निकाल फैंकने की लालसा रखने वाले एक दिन इसके महत्व को समझेंगे।**

सम्पूर्ण समाधान ऋषियों की व्यवस्था ही है जिसे महर्षि दयानन्द ने भी प्रस्तुत किया। अति संक्षेप व संकेत में कहें तो-

१. बालक में गर्भावस्था से ही नैतिक संस्कार डालें। अब यह आधुनिक विज्ञान भी मानने लगा है कि गर्भ में शिशु पर संस्कार पड़ते ही हैं। इसीलिए गर्भाधान-पूर्व से ही माता-पिता स्वयं सदाचारी बनें। विवेक को नष्ट कर देने वाले मद्यादि पदार्थों का सेवन सर्वथा त्याग दें।

२. शाला-प्रस्थान से पूर्व जब तक बालक घर में रहे पूर्ण नैतिक वातावरण में रहे। माता उसे उदात्त मानवीय मूल्यों के आभूषण पहनावे।

   तत्पश्चात् शिक्षा कैसी हो, आचार्य कैसे हों, शिक्षणालय कैसे व कहाँ हों, अध्ययनकाल में बिना राजा और रंक के भेद किए समान आसन, खान-पान आदि का व्यवस्था हो पूर्ण नैतिक परिवेश हो, की विशद् चर्चा महर्षि दयानन्द ने अपने महान् ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में की है।

३. सम्पूर्ण अध्ययन काल में पूर्ण ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन विद्यार्थी करें। शिक्षक इसका विशेष ध्यान रखें। सम्पूर्ण काल में माता-पितादि भी न मिलें।

४. शिक्षा सम्पूर्ण करने के पश्चात् ही पूर्ण युवावस्था में विवाह हो। बाल्यावस्था में विवाह दण्डनीय अपराध हो।

५. सब प्रकार के व्यसनों, विकारों से मुक्त विद्यार्थियों का व्यक्तित्व हो ऐसा प्रयास करना गुरुजनों का कार्य है।

जब इस प्रकार का श्रेष्ठ परिवेश विद्या-ग्रहण काल में होगा तथा समाज में भी नैतिक सदाचारयुक्त वातावरण होगा तभी समाज की सारी समस्याओं का सम्पूर्ण हल होगा।

अर्थात् मानव-निर्माण ही स्वस्थ राष्ट्र की कुञ्जी है।

आज क्या हो रहा है?हम उक्त पद्धति से विपरीत दिशा में अत्यन्त तीव्र गति से भाग ही नही रहे इसी पथ को उन्नति का राजमार्ग भी समझ रहे हैं तो फिर दामिनी-काण्ड जैसे बर्बर नृशंस काण्ड को रोक पाना भी कठिन है। वस्तुतः हमने अपार उन्नति (भौतिक) तो की है पर जिसके लिए यह सब है उस मानव-निर्माण के कार्य को पूर्णरूपेण भुला दिया है।

हमारे पाठक कहेंगे कि यह आदर्शों के दिवा स्वप्न हैं जो कभी भी संभव नहीं हैं। वस्तुतः धारा के विपरीत तैरना सदैव ही असंभव जान पड़ता है। ठान लिया जाय तो सब प्राप्य है। उक्त सभी बातों को जो नितान्त रूढ़िवादी कहेंगे उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता है, परन्तु आने वाला समय उनकी मानसिकता में अवश्य परिवर्तन लावेगा।

(२) रक्षात्मक- उत्प्रेरकों का स्थान- अघटित घटने की प्रक्रिया में दूषित संस्कारों के फलस्वरूप सर्वप्रथम 'कुविचार' जाग्रत होता है। प्रेरक परिस्थितियों का इस कुविचार को जन्म देने में महत्वपूर्ण स्थान होता है। घर से बाहर मर्यादित शालीन कपड़ों में जब आप जाते हैं, कार्यस्थल पर

ओ३म्

'सत्यार्थ-सौरभ' मासिक पत्रिका

सदस्यता फार्म

वैदिक शिक्षाओं व भारतीय संस्कृति को जन-जन में प्रसारित करने हेतु आप द्वारा सत्यार्थ प्रकाश को समर्पित सत्यार्थ-सौरभ पत्रिका के प्रकाशन का निर्णय स्तुत्य है। मैं इस पत्रिका का संरक्षक/ आजीवन/ विशिष्ट/वार्षिक सदस्यता ग्रहण करता /करती हूँ।

पत्रिका सहयोगः-

संरक्षक पत्रिका- ११०००/- ☐
आजीवन (१५) वर्ष- १०००/- ☐
विशिष्ट सदस्य (५) वर्ष- ४००/- ☐
वार्षिक सदस्य- १००/- ☐

राशि जरिये/ ड्राफ्ट/ चैक/ मनीआर्डर/ नकद प्रेषित कर रहा/रही हूँ।

मेरा विवरण :-
१. नाम ....
....
२. पूरा पता ....
....
....
पिन ☐☐☐☐☐☐
३.टेलिफोन नं. ....
मोबाइल नं. ....
४. ई-मेल ....

नोटः
१.आप अपना सहयोग बैंक में "श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास" के खाते में भी जमा करवा सकते हैं। बैंक खाता सं.३१०१०२०१००४१५१८ यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, मुख्य शाखा उदयपुर। ऐसा करने वाले महानुभाव अपना नाम व पता दूरभाष या पत्र द्वारा तत्काल सूचित करने का श्रम करें, जिससे समय पर रसीद भेजी जा सके।
२.आप अपनी सहयोग राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीऑर्डर से ना भेजें। यदि भेजते हैं तो दूरभाष या पत्र द्वारा सूचना अवश्य प्रेषित करें।
३.पता परिवर्तन होने पर परिवर्तित पते की सूचना अति शीघ्र भेजें।
४.जिन महानुभावों ने राशि भेज सदस्यता ग्रहण कर ली है, पर यह विवरण पत्र नही भरा है वे कृपया रिकार्ड हेतु इस प्रपत्र को भरकर अवश्य भेज दें।
५. कृपया अपने गाँव/शहर/जिला/राज्य का पिन कोड अवश्य लिखें।

सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

- सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो। सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु,कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन-जन के हाथों में पहुँच सके,एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है:-
- सत्यार्थ प्रकाश (मानक संस्करण) की द्वितीय आवृत्ति छपने में है। कृपया निम्नानुसार सहयोग कर लागत मूल्य से आधी कीमत में सत्यार्थ प्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ पर दिया जावेगा।

राशि	प्रतियों की संख्या	राशि	प्रतियों की संख्या
एक लाख रु.	दस हजार	७५०००	७५००
५००००	५०००	२५०००	२५००
१००००	१०००	इससे स्वल्प राशि देने वाले दानवीरों के नाम ग्रन्थ में अंकित किये जायेंगे।	

आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अंतर्गत करमुक्त होगा। राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, उदयपुर खाता क्रमांक ३१०१०२०१००४१५१८ में जमा कर सूचित करें।

निवेदक

भवानीदास आर्य — मंत्री-न्यास
भंवरलाल गर्ग — कार्यालय मंत्री
डॉ.अमृत लाल तापड़िया — उपमंत्री-न्यास

आर्य जगत् के समाचार जानने एवं 'सत्यार्थ सौरभ' ऑनलाइन पढ़ने के लिए लॉगऑन करें

www.satyarthprakashnyas.org

आधी कीमत में

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थ प्रकाश के अनुरुप, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित सत्यार्थ प्रकाश (मानक संस्करण) अवश्य खरीदें।

मात्र ४० ₹

प्राप्ति स्थल

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर - ३१३ १

- अधिकारी वर्ग से विशेष निवेदन-कृपया अपनी संस्था को 'सत्यार्थ-सौरभ' परिवार से अवश्य जोड़े।
- विद्वानों से निवेदन है कि वे केवल सत्यार्थ-सौरभ के लिये लिखे गये अपने संक्षिप्त, सारगर्भित लेख प्रेषित करने की कृपा करें।

जिन सज्जनों को यह पत्रिका प्राप्त हुई है, वे तो अवश्य ही 'सत्यार्थ - सौरभ' परिवार से तुरन्त जुड़ने की कृपा करें।

कार्य करते हैं तो 'काम' के उत्प्रेरक तत्व की न्यूनता के कारण 'कुविचारों' के जाग्रत होने की संभावना अपेक्षाकृत न्यून हो जाती है। इसके विपरीत मर्यादाहीन स्वच्छन्द पहिनावा व व्यवहार कुविचारों को उत्प्रेरित करता है तथा यह भी कि सहकर्मी/सहपाठी/सहयात्री के व्यक्तित्व के बारे में भी कई बार गलत धारणा बना लेने का अवसर भी देता है।

'कुविचार' सदैव कुकर्म में परिणित हो जाय ऐसा नहीं होता। लोकलाज, समाज में अपमानित होने का भय, सबसे बड़ा 'दण्ड' का भय आपको पतन के मार्ग पर जाने से रोक लेता है। प्रक्रिया मानसिक पाप तक सीमित रह जाती है। यही मनुष्य जीवन में 'विवेक' का महत्व है। क्योंकि जैसे ही कुविचार आया, उपरोक्त स्थितियों का ध्यान कर उन्हें कुचल देने का कार्य मनुष्य का विवेक करता है। जब विवेक नष्ट हो जाता है तो कुकार्य के कुफल का भय भी समाप्त हो जाता है। और कुविचार हावी होकर कुकर्म में परिणित हो जाता है।

यूँ तो इस अंकुश अर्थात् विवेक के नष्ट हो जाने के कई कारण हैं पर हम दो की चर्चा यहाँ करेंगे। परिवेश की चर्चा कर ही चुके हैं।

(१) मादक द्रव्य सेवन (२) अवसर की उपलब्धता

१.मादक द्रव्य सेवन- मादक द्रव्य, मद्य, हेरोइन, एल.एस.डी., अफीम आदि विवेक को नष्ट कर देने वाले पदार्थ हैं। कहा है- 'बुद्धि लुम्पति यद् द्रव्यं मदकारी तदुच्यते।' इनका सेवन किया हुआ व्यक्ति अन्तरात्मा की आवाज को अनसुनी कर देता है। महर्षि दयानन्द ने लिखा है- ***'अच्छे कर्मों को करने में भीतर से आनन्द, उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न होती है; वह अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा है।'*** **(सत्यार्थ प्रकाश पृ. २४३)**

इस प्रकार बुरे कार्य करने में जो भय, शंका, लज्जा के भाव उत्पन्न होने के रूप में परमात्मा की ओर से सँभल जाने की दस्तक होती है उसे नष्ट-विवेक व्यक्ति पूर्णतः अनसुना कर देता है। कौरवों की उस सभा का ध्यान कीजिए जिसमें एकवस्त्रा कौरव कुलवधू द्रौपदी को अपमानित किया जा रहा था। दूषित अन्न सेवन से नष्ट-विवेक भीष्म पितामह, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य जैसे मनीषी गर्दन झुकाए बैठे थे। *अतः राजस्व हानि क्यों न हो स्वस्थ समाज-निर्माण हेतु ऐसे पदार्थों को पूर्ण प्रतिबन्धित कर देना चाहिए।* प्रायः अपराधी शराब सेवन किए हुए पाये जाते हैं।

२.अवसर की उपलब्धता- कानून के उल्लंघन का विचार, अनैतिक सोच, कुविचार अवसर मिले तो सिर उठा लेते हैं। उदाहरण के तौर पर आप कहीं जा रहे हैं। सामान्यतः आप कानून का पालन करने वाले तथा नैतिकता का उल्लंघन न करने वाले नागरिक हैं। अचानक आपकी दृष्टि १००-१०० के ५-६ नोटों पर पड़ती है, जो सड़क पर पड़े हैं। आप इधर-उधर देखते हैं अगर सुनसान स्थल है, दूर-दूर तक कोई नहीं है, अंधेरा भी है जिसके कारण किसी के द्वारा आपको देख लिए जाने की संभावना न्यून है तो, उन नोटों को उठा लेने का कुविचार यदि आपके मन में पनपा वह कार्यरूप में परिणित होने की ओर कदम बढ़ा देता है। और आप अन्तरात्मा में उठने वाले भय, शंका, लज्जा के भावों को यह सोच कुचल देते हैं कि कोई देख थोड़े ही रहा है, किसी को पता भी नहीं चलेगा। *लालच जीत जाता है नैतिकता हार जाती है।* यही दिन का समय होता कुछ लोग आ जा रहे होते तो आप चोरी के इस कुविचार को

बलपूर्वक दबा देते। ६० प्रतिशत से अधिक लोगों की यही स्थिति होती है। परमात्मा को सर्वव्यापक जान, वह सब कुछ सदैव देख रहा है यह स्मरण कर ऐसी परिस्थिति में लोभ को कुचल चोरी से बच जाना तो विरलों के बस की बात है।

यही बात महिलाओं के प्रति अपराध में लागू होती है। अगर रात के १२ न बजे होते, सुनसान इलाका न होता, बस में अन्य सहयात्री भी होते तो दामिनी काण्ड घटित होने की सम्भावना भी कम हो जाती। और महिलाएँ ही क्यों किसी भी अपराध में अपराधी के लिए अवसर की अनुकूलता या ऐसी स्थितियाँ जिसमें अपराधी के मन में कुविचार तीव्रतर हो जाय (उदाहरण के तौर पर यात्राएँ करते समय सोने के गहनों से लदे होना, आदि) अपराध घटित होने में सहायक बन जाती हैं। **या तो आपके राष्ट्र की कानून व्यवस्था व दण्ड प्रावधान और उसे लागू करने वाली कार्यपालिका, न्यायपालिका आदि इतने दक्ष व कर्त्तव्यनिष्ठ हों कि अपराधी अपराध करने से पूर्व परिणाम सोचकर दहल जाये तो ठीक, अन्यथा ऐसा अवसर उत्पन्न करने से, जिससे कुविचार उत्पन्न हो, तीव्र हो, उसे क्रियान्वयन का अनुकूल अवसर दुष्कर्मी को प्राप्त हो, बचना ही श्रेयस्कर है। यह रक्षात्मक उपाय है। जो हमारे देश में अत्यावश्यक है क्योंकि कानून व्यवस्था पूर्णतः पंगु तथा बन्धक है।**

(३) दण्ड व्यवस्था- ऊपर हमने एक आदर्श समाज के निर्माण का संकेत किया है। पर यह कहना अनुचित होगा कि जब तक उपरोक्त स्थिति प्राप्त नहीं होती, तब तक कुछ भी नहीं हो सकेगा। **अपराध व अपराधी मनोवृत्ति पर दण्ड ही अंकुश लगा सकता है।** मानसिक रूप से अपराधी कुछ भी करने का विचार करता रहे, पर निश्चित दण्ड उसको अपने कुविचारों को दबा लेने हेतु विवश करेगा। इसमें केवल कानून-निर्माण से कार्य न चलेगा उसे दृढ़ निश्चय के साथ जब तक लागू नहीं किया जावेगा तब तक सुशासन नहीं कहा जा सकता।

मूल बात यह है कि अपराधी के मन में दण्ड का इतना भय हो और वह दण्ड मिलना सुनिश्चित माने कि अपराध करते समय वह जिस तथाकथित इन्द्रिय सुख की इच्छा से दुष्कर्म में प्रेरित हो, उसी समय भयंकर लाल आँखें किए दण्ड उसके समक्ष घूमने लगे कि 'कुविचार' दुम दबाकर भाग ले।

रिश्वत लेते समय यदि परिवेश का माहौल इस प्रकार का होगा कि भ्रष्टाचारी यह जानेगा कि वह रिश्वत देकर, भाई-भतीजावाद या अन्यान्य उपायों से दण्ड से बच जावेगा, तो लालच के अपने कुविचार को अन्तरात्मा की आवाज पर हावी हो जाने देगा परन्तु यदि उसे यह निश्चय होगा कि रिश्वत लेकर जो थोड़ा लाभ वह लेगा उससे कई गुना ज्यादा दण्ड निश्चय से उसे मिलेगा तो शायद वह रिश्वत न ले।

मनु महाराज ने इसीलिए दण्ड के विषय में कहा है।

'बिना दण्ड के सब वर्ण दूषित और सब मर्यादा छिन्न-भिन्न हो जॉय। दण्ड के यथावत् न होने से सब लोगों का प्रकोप हो जावे।'

'जहाँ कृष्ण वर्ण-रक्तनेत्र-भयंकर पुरुष के समान पापों का नाश करनेहारा दण्ड विचरता है वहाँ प्रजा मोह को प्राप्त न होके आनन्दित होती है परन्तु जो दण्ड का चलाने वाला पक्षपात रहित विद्वान् हो तो। -मनुस्मृति

परन्तु आज क्या स्थिति है?अपराधी उलटा यह निश्चय से जानता है कि वह छूट जाएगा, तो फिर अपराध क्यों न बढ़े?समाज में घृणा का पात्र समझा जाना भी कोई कम दण्ड नहीं है। पर आज का परिवेश भी बदल गया है। दुष्कर्मी ज्यादा से ज्यादा उपेक्षा का ही पात्र बनता है। अव्वल तो समाज में कुछ उथल पुथल होती ही नही। सब कुछ सामान्य मान लिया जाता है। दामिनी-काण्ड तो मीडिया के कारण व्यापक चर्चा का विषय बना, आक्रोश का कारण बना (जो कि होना भी चाहिए) परन्तु दामिनी-काण्ड से १५ दिन पूर्व की तथा बाद की क्राइम रिपोर्ट उठाकर देख लें क्या इन दिनों में बलात्कार जैसे दुष्कर्म नहीं हुए?

समाज की स्मृति भी अल्प होती है। कुछ दिनों में इस केस को लोग भूल जाएँगे। मीडिया पर कुछ नया आ जावेगा, दामिनी पीछे छूट जावेगी। परन्तु भय तथा आशंका मुक्त समाज-निर्माण का चिन्तन तथा उस दिशा में कदम बढ़ाने का कार्य कभी नहीं रुकना चाहिए। यह विचार इसी भावना से प्रस्तुत किए हैं। बलात्कार के अपराधियों को क्या दण्ड हो बहस चल रही हैं तो पुनः मनु महाराज को उद्धृत करेंगें। **(व्याभिचारी) पापी को लोहे के पलंग को अग्नि से तपा के लाल कर उस पर सुलाके जीते को बहुत पुरुषों के सम्मुख भस्म कर देवें।**

चुपचाप सजा देने से समाज में दण्ड का भय व्याप्त नहीं होता। इसीलिए मनु ने सार्वजनिक रूप से दण्ड-विधान किया है। कसाब की तरह का चुपचाप मृत्युदण्ड अपराधियों में दण्ड का खौफ उत्पन्न नहीं करता। **यदि आप ऐसी व्यवस्था बना पाने में असमर्थ है जिसमें ५ वर्ष की बालिका भी दुष्कर्म से सुरक्षित नहीं कही जा सकती तो कुक्षि में पल रही बालिका का यह प्रश्न नाजायज कैसे कहा जा सकता है कि- 'क्यों आए इस देश में लाडो'?** आश्वासन हमें देना है, गारण्टी हमें देनी है। जबाबदेह हम ही हैं।

- अशोक आर्य
०६३१४२३५१०१, ०६००१३३६८३६

❑❑❑

क्या आपने नेत्रदान किया?

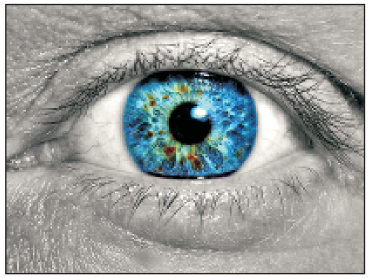

हमारे देश में प्रत्येक वर्ष प्रकाश पर्व दीपावली के रूप में मनाया जाता है जिसका एक ही भाव होता है अंधकार को दूर भगाना। प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन में ऐसा दीप जलाना चाहिए जिससे प्रत्येक मनुष्य के जीवन का अंधकार दूर हो सके क्योंकि प्रायः देखा जाता है कि प्रत्येक दीपक तले अंधेरा हाता है जिसको दूसरा दीपक ही स्वयं जल कर उस दीप के तले के अंधकार को दूर कर देता है। इसके अतिरिक्त एक दीप से दूसरा दीप जलाया जा सकता है। इस प्रकार यदि श्रृंखलाबद्ध तरीके से दीप से दीप जलाते चले जायें तो हर दीप का प्रकाश, प्रकाश को और बढ़ाता है जिससे सब ओर प्रकाश ही प्रकाश होगा और संपूर्ण संसार से अंधकार समूल नष्ट हो जायेगा।

यहाँ कहने का तात्पर्य है कि जिनके जीवन में नेत्र ज्योति नहीं है उनके जीवन में ज्योति लायी जाये, जिससे सब कुछ देखा जा सकता है और उनका जीवन प्रकाशमय हो सकता है अन्यथा यदि उनके जीवन में नेत्र ज्योति ही नहीं है तो उनकी दुनियाँ में अंधेरा ही अंधेरा है। इन्हीं भावनाओं को लेकर किसी कवि ने कहा है-

जलाओ दिये पर रहे ध्यान इतना। अंधेरा धरा पर कहीं रह न जाये॥

कवि के इन पंक्तियों को लिखने का भाव यह है कि यदि अपने जीवन में खुशियों के दीप जलाते हो तो यह भी ध्यान रखो कि संसार में अन्य ऐसे अनेक प्राणी हैं जिनके जीवन में अंधकार है। उनको भी अपनी खुशियों में सम्मिलित कर लो। इस प्रकार जब तुम दूसरों को भी खुशियाँ प्रदान कर उनके जीवन के अंधकार को दूर करो तो उनके जीवन में तो खुशियाँ आयेंगी ही, तुम्हारी भी आत्मा को संतोष प्राप्त होगा।

आज भारत नहीं बल्कि विश्व में नेत्रांधता बढ़ती जा रही है। नेत्रांधता बढ़ने के विभिन्न कारण हो सकते हैं जैसे-जन्मांधता, मोतियाबिन्द, ग्लुकोमा, ट्राकोमा, रिवर ब्लाइंडनेस, मधुमेह नेत्रांधता, दुर्घटनावश नेत्रांधता आदि। नेत्रांधता को रोकने के लिए वैज्ञानिकों द्वारा विज्ञान के माध्यम से दिन-प्रतिदिन नये-नये आविष्कार किये जा रहे हैं। आपरेशन की नयी-नयी विधियाँ वैज्ञानिकों द्वारा खोज ली गई हैं। जिससे नेत्रांधता को दूर किया जा रहा है। इसलिए सरकार एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा भी सजग होकर समय समय पर विभिन्न कार्य किये जा रहे हैं। अनेक चिकित्सालय तथा शिविर स्थापित किये जा रहे हैं जिनमें डाक्टरों द्वारा नेत्र रोगियों को निःशुल्क चिकित्सा प्रदान की जा रही है। परन्तु अभी तक नेत्रों का विकल्प अर्थात् कृत्रिम नेत्र वैज्ञानिकों द्वारा तैयार नहीं किया जा सका है। यद्यपि वे इसके लिए प्रयासरत् हैं। सम्भव है भविष्य में नेत्रों का कोई विकल्प निकल आये और किसी से नेत्रदान लेना ही न पड़े।

नेत्रांध लोगों को ज्योति प्रदान करने का एक ही विकल्प हैं नेत्रदान। दान के लिए हमारा देश विश्वविख्यात है। विश्व कल्याण की भावना से दिया हुआ दान कैसा भी हो सकता है-विद्यादान, अन्नदान, अस्थिदान, शरीरदान आदि-आदि । दानदाताओं में ऐसे दानी हुए हैं जो दान देकर संसार में सदैव के लिए अमर हो गये हैं। जिनमें महर्षि दाधीचि, महाराज शिवि, महाराज कर्ण, महाराज बलि, महाराज हरिश्चन्द्र आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं और इतिहास में उनका नाम स्वर्णाक्षरों से लिखा हुआ है। इसी श्रृंखला में धामपुर (जनपद बिजनौर) के एक समाज सेवी स्व. हरीशचन्द्र आत्रेय ने भी नेत्रदान हेतु प्रेरित कर लोगों में जागरूकता उत्पन्न की थी। उनकी प्रेरणा से प्रेरित होकर १९८४ से २००६ तक सात हजार से अधिक व्यक्तियों ने अखिल भारतीय नेत्र अनुसंधान केन्द्र, दिल्ली में अपने नेत्र दान दिये थे। दुःख का विषय तो यह है कि हमारे देश में अभी नेत्रदान के लिए लोगों में जागरूकता नहीं है। दूसरे उनमें अंधविश्वास की भावना भी व्याप्त है कि मृत्यु पश्चात् नेत्र निकाल लेने के पश्चात् दूसरे जन्म में व्यक्ति नेत्रहीन होगा। इसके साथ ही साथ यह कि शरीर कुरूप हो जायेगा । जबकि वास्तविकता इसके विपरीत है। इसके अतिरिक्त अभी हमारे देश में सरकार द्वारा भी प्रचार-प्रसार नहीं किया जा रहा है।

नेत्रदान के लिए कोई भी व्यक्ति मृत्यु उपरांत अपने नेत्रदान कर सकता है। इसके लिए नेत्रदान संस्था के माध्यम से नेत्रदाता द्वारा इच्छापत्र भरा जाता है,जिसमें नेत्रदाता अपने नेत्र दान करने का संकल्प लेता है। इसके लिए इसको एक प्लास्टिक का अभिलेख पत्र (प्लास्टिक परिचय कार्ड) दे दिया जाता है। जिस समय उसकी मृत्यु होती है तो परिवार के सदस्य उसकी सूचना नेत्रदान संस्था को दे देते हैं जो हर जनपद में होती है। सूचना पर डाक्टर आता है और नेत्रदाता की दोनों आँखे निकाल कर ले जाता है। सबसे विशेष बात यह है कि नेत्र निकाल लेने के पश्चात् नेत्रदाता का चेहरा विकृत नहीं होता है। यह निकाली गई आँखे रसायन में सुरक्षित रख ली जाती हैं और जिन नेत्रहीनों को आवश्यकता होती है उनके शरीर में एक निश्चित अवधि में प्रत्यारोपित कर दी जाती हैं और वे नेत्रहीन उन प्रत्यारोपित आँखों से दृष्टि पा जाते हैं और उनका अंधकारमय जीवन ज्योतिर्मय हो जाता है। इसी कारण यह नेत्रदान अमूल्य निधि है और नेत्रदाता इस लोक में तो पुण्यनिधि एकत्र करता ही है इसके साथ ही साथ वह परलोक में भी पुण्यनिधि प्राप्त करता है। हमारा शरीर मृत्यु के पश्चात् या तो जलकर राख होना है या फिर जमीन में दफन होकर मिट्टी में परिवर्तित होना है तो क्यों न हम मृत्यु के पश्चात् अपने शारीरिक अंग दान कर जायें जिससे सभी को लाभ हो।

❑❑❑

- कृष्ण गोपाल, अमरोहा

संस्कृत की उपेक्षा अक्षम्य राष्ट्रीय अपराध

- पं. उमाकान्त उपाध्याय

संस्कृत संसार की प्राचीनतम् भाषा है। निर्विवाद रूप से वेद संसार के प्राचीनतम साहित्य में हैं। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् मैक्समूलर का कहना है कि ऋग्वेद संसार के पुस्तकालय का प्राचीनतम ग्रन्थ है। ऋग्वेद में दस हजार से अधिक मंत्र हैं। मैक्समूलर का यह भी कहना है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है और कुरान, बाईबल, जेन्दावस्ता यह भी ईश्वरीय ग्रन्थ हैं। वेद सारे ग्रन्थों से लाखों लाख वर्ष पुराने हैं। मैक्समूलर एक बड़े महत्व की बात यह कहता है कि यदि ईश्वर ने बाईबल, कुरान आदि से पहले वेद के ज्ञान का प्रादुर्भाव न किया होता तो यह उस युग के मनुष्यों के साथ परमेश्वर की ओर से अन्याय हो जाता। कोई कारण नहीं है कि किसी युग के मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान से वंचित रहें।

वेद के अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, रामायण, महाभारत सभी ग्रन्थ संस्कृत में हैं। बौद्धों और जैनियों का बहुत बड़ा साहित्य संस्कृत में है। दो हजार साल पहले तक लिखने, बोलने, धार्मिक सभी कुछ संस्कृत में था। व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, ज्ञान-विज्ञान सभी कुछ संस्कृत में ही है। शून्य और दशमलव तक तथा अक्षांश, देशान्तर, भूगोल, खगोल सारा विज्ञान संस्कृत में ही लिपिबद्ध हुआ है।

राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से संस्कृत आज के दिन भी सारे देश की सुदृढ़तम श्रृंखला है। वही वेद मंत्र, वही स्वस्तिवाचन, वही शान्तिकरण के मंत्र यदि रामेश्वरम् में पढ़े जाते हैं तो मानसरोवर गौरी शंकर, केदारनाथ और बद्रीनाथ, गंगोत्री में भी वही मंत्र पढ़े जाते हैं। वही मंत्र अरब सागर के किनारे सोमनाथ के मंदिर में पढ़े जाते हैं और वही मंत्र बंगाल की खाड़ी पूर्वी महासमुद्र गंगासागर के तट पर भी पढ़े जाते हैं। संस्कृत भाषा की ही विशेषता है कि कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी, रामेश्वरम् तक और अरब सागर द्वारिकापुरी से लेकर गंगासागर तक सारा देश एकता के सुर में गूँज उठता है। **ऐसी प्राचीनतम् बृहत्तम् और सम्पन्न एवं महत्वपूर्ण भाषा की उपेक्षा राष्ट्रीय अपराध है। कम से कम भावनात्मक एकता सम्पूर्ण राष्ट्र में बनी रहे इसके लिये सारे देश में संस्कृत की शिक्षा देना अनिवार्य होना चाहिये।**

अंग्रेजों के राज्य में जब परतंत्रता का युग था, उस समय क्लासिकल (classical) भाषा के रूप में संस्कृत की पढ़ाई सारी भारतीय भाषाओं के साथ अनिवार्य थी। हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगाली, तमिल, तेलगू, कन्नड़ आदि सभी भाषाओं के साथ संस्कृत का अध्यापन अनिवार्य था। हाई स्कूल तक सभी भारतीय बच्चे संस्कृत पढ़ते थे और गीता गायत्री स्त्रोत्र आदि उनके लिए अपरिचित नहीं थे। केवल अरबी, फारसी मूल के विद्यार्थी उर्दू पढ़ते थे। अतः सारे भारतीय मूल के विद्यार्थी हाईस्कूल तक इस भावनात्मक एकता से अनायास ही परिचित हो जाते थे। किन्तु अब स्थिति भिन्न है। संस्कृत कहीं पढ़ाई नही जा रही है। अब तो स्थानीय स्वार्थ और आंचलिक दबाव के चलते आंचलिक भाषाएँ बड़ी बलवती हो उठी हैं। स्वतन्त्रता मिलने के तुरन्त पश्चात् एक बार यह माँग दक्षिण भारत में उठी थी कि हिन्दी के स्थान पर संस्कृत को राष्ट्र भाषा और जनसम्पर्क की भाषा बना दिया जाये। वह माँग उत्तर भारत के हिन्दी प्रेम में दबा दी गयी। गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, पंजाब, बंगाल समेत सारा उत्तर भारत हिन्दी के लिए जोर लगाने लगा और हिन्दी कहने को राष्ट्र भाषा बन गयी। अभी भी हिन्दी दिवस मनाया जाता है लेकिन हमारे कई केन्द्रीय मंत्री ऐसे हैं जो एक शब्द भी भारतीय भाषाओं का नहीं बोलते। ऐसा नहीं है कि वे हिन्दी नहीं बोल सकते या अपनी क्षेत्रीय भाषा नहीं बोल सकते किन्तु वित्तमंत्री(तत्कालीन) श्री प्रणव मुखर्जी, गृहमंत्री श्री पी. चिदम्बरम्, एन्टोनी आदि ऐसे मंत्री हैं जो एक शब्द भी संसद या संसदीय वक्तव्य में देशी भाषा नहीं बोलते। इस परिस्थिति में हिन्दी ही उपेक्षित हो गयी है संस्कृत का तो कहना ही क्या?

हिन्दी, संस्कृत की योजनाबद्ध उपेक्षा :-

जब हिन्दी राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा के रूप में मान ली गयी उस समय केन्द्रीय सरकार में वर्चस्व अंग्रेजी का ही रहा। हिन्दी को राज भाषा बनाना भोले-भाले हिन्दी भक्तों के हाथ में झुनझुना थमा देना जैसा था। सारा राजकीय कार्य अंग्रेजी में ही होता रहा। प्रशासनिक स्तर पर और समाचार मीडिया में अंग्रेजी का वर्चस्व जैसे का तैसा रहा बल्कि ऊँचे तबके के लोग अंग्रेजी की ओर आकृष्ट होते चले गये और परिणाम हुआ हिन्दी की उपेक्षा और अंग्रेजी का वर्चस्व-वर्धन।

हिन्दी को उखाड़ने का एक और प्रयास :-

देश के दुर्भाग्य पूर्ण विभाजन के पश्चात् पाकिस्तान से लगती पश्चिमी सीमा तक पंजाब एक प्रखर हिन्दी, हिन्दू राज्य बन गया। उस समय पंजाब में ६० प्रतिशत विद्यार्थी हिन्दी माध्यम से माध्यमिक परीक्षा देते थे। यह ६० प्रतिशत पंजाबी मातृभाषा और सिक्ख समुदाय पर भी लागू होता था। श्री जवाहर लाल नेहरू जी ने ताड़ लिया कि यदि पंजाबी विशेषकर सिक्खों को पंजाबी भाषा का लोभ दिलाया जाये तो पंजाब में हिन्दी हिन्दू का वर्चस्व नष्ट हो जायेगा और कांग्रेस की सरकार आसानी से बन पायेगी। केंद्रीय सरकार ने पंजाब में हिन्दी को उखाड़ने में सफल प्रयास किया। उसी का एक रूप बना सशस्त्र आतंकवाद, जिसे इन्दिरा जी ने भरपूर ढोया और स्वर्ण मन्दिर सैन्य प्रवेश तथा इन्दिरा जी की निर्मम हत्या

और दिल्ली का हिन्दू-सिक्ख जातीय संघर्ष जो आज भी नासूर बना हुआ है। सामूहिक परिणाम हुआ हिन्दी और संस्कृत की उपेक्षा। पंजाबी एक आंचलिक भाषा है। पंजाब के इस उदाहरण ने हिन्दी परिवार के वृहत्तम आयतन में दरारें पैदा कर दी हैं। केन्द्र के निर्बल नेतृत्व और आंचलिक नेतृत्व की महिमा ने भोजपुरी, मैथिली, बुन्देलखण्डी आदि का केस उपस्थित कर दिया है और उपेक्षा हिन्दी की हो रही है।

भाषा का त्रिसूत्री नियमः- कहने को आज हाई स्कूल तक त्रिसूत्री नियम चालू है। इसमें राष्ट्रभाषा, अंग्रेजी और एक देशी भाषा की पढ़ाई स्कूलों में हो रही है। आज अंग्रेजी का वर्चस्व इतना बढ़ गया है कि तीनों भाषाओं में अंग्रेजी प्रथम स्थान पर जगह पा रही है। हिन्दी और दूसरी भारतीय भाषाएँ गौण हो रही हैं। आगे जब हिन्दी या बंगला प्रथम भाषा थी तो संस्कृत का अपना एक महत्व था। भारतीय मूल की सभी भाषाओं की जननी संस्कृत है।

संस्कृत शक्ति का भण्डार :- भारतीय मूल की जितनी भाषाएँ हैं उन सबका मूल संस्कृत है। संस्कृत का शब्द भण्डार अक्षय कोष है। संस्कृत में लगभग २ हजार धातु हैं एक-एक धातु से अनगिनत शब्द बनते हैं। कम्प्यूटर विज्ञान ने संस्कृत को कम्प्यूटरीकृत भाषा के रूप में ग्रहण करने की योजना बनायी थी। भारतीय मूल की सभी भाषाओं का शक्तिभण्डार संस्कृत ही आता है। आज इन भारतीय मूल की भाषाओं का प्रयोग बढ़ेगा तो संस्कृत की उपादेयता अपने आप बढ़ जायेगी। किन्तु फार्मूला बड़ा सीधा सा अपनाया गया है। भारतीय भाषाओं की महिमा घटायी जाये, अंग्रेजी की महिमा बढ़ायी जाये, प्रशासन में अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ाया जाये तो संस्कृत अपने आप समाप्त होती है।

संस्कृत की रक्षा भारतीयता की रक्षा है :- यदि संस्कृत हमारे हाथ से निकल गयी तो हम वेदों से, उपनिषदों से और संसार के सर्वाधिक प्राचीन ज्ञान के भण्डार से दूर हो जायेंगे। भारतवर्ष की भारतीयता के प्रतीक संस्कृत के महाकवि कालिदास, भवभूति आदि हमसे दूर हो जायेंगे। विश्व साहित्य की अक्षय निधि से सम्पर्क में रहना है तो राजनीतिक और प्रशासनिक मानदण्डों से ऊपर उठकर संस्कृत की रक्षा करनी है। संस्कृत भाषा न रही तो रामायण, महाभारत, गीता, गायत्री सब कुछ हमारे लिए दूर हो जायेगा और हम अपनी भारतीयता की गरिमा खो बैठेंगे। अतः हिन्दी और संस्कृत दोनों को बचाने की राष्ट्रीय योजना बनानी चाहिए।

ईशावास्यम्, पी-३०, कालिन्दी, कोलकाता

❑❑❑

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री आर.डी. गुप्त, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष,श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभाआर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, प्रो. आई. जे. भाटिया, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह एवं

स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती
पिण्डवाडा

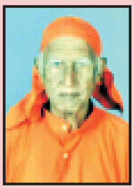
स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती
सायला गुजरात

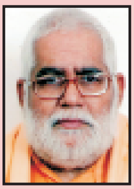
स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती
दिल्ली

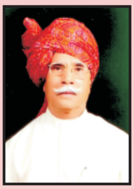
श्रीयुत् राव हरिचन्द्र
नागपुर

श्री लोकेश चन्द्र टाक
बैंगलोर

श्री रघुनाथ मित्तल
भीलवाड़ा

श्रीमती गायत्री पंवार
जयपुर

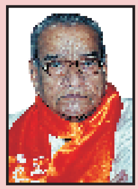
श्री प्रधान जी
मध्यभारतीय आ. प्र. सभा

प्रो. आर.के. एरन
उदयपुर

श्री भारतभूषण गुप्ता
नोएडा

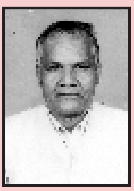
श्री खुशहालचंद्र आर्य
कोलकाता

श्री कृष्ण चौपड़ा
यू.के.

श्री नरेश कुमार राणा
नई दिल्ली

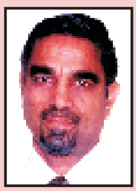
डॉ. मोतीलाल शर्मा
जयपुर

श्री विजय तायलिया
उदयपुर

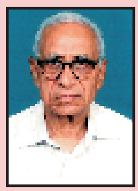
श्री वीरेन्द्र मित्तल
उदयपुर

श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक
बैंगलुरू

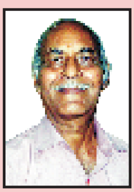
डॉ. अमृतलाल तापड़िया
उदयपुर

श्री विकास गुप्ता
नोएडा

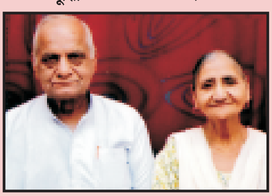
श्री रामप्रकाश छाबड़ा एवं श्रीमती कलावती छाबड़ा
दिल्ली

आर्य समाज
हिरण मगरी
से.४,
उदयपुर

आर्य समाज हिरण मगरी
उदयपुर

डी.ए.वी.
एकेडमी
टाण्डा

श्री आनन्द कुमार आर्य
टाण्डा

मिश्रीलाल
आर्य कन्या
इण्टर कॉलेज
टाण्डा

श्री आनन्द कुमार आर्य
टाण्डा

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में
स्त्री जाति का उत्थान

स्त्री-पुरुष समानता, नारी उद्धार, स्त्री शिक्षा, आदि विषयों को लेकर सामाजिक जीवन में उच्च स्वर से वक्तव्य दिया जाता है तथा कुछ वर्षों से इस पर पर्याप्त मात्रा में लेखन भी हुआ है जो स्वागत योग्य है।

बहुचर्चित इस विषय का समाज में कहाँ तक आचरण होता है यह जब हम देखते हैं तो निराशा ही हाथ लगती है। उन्नति हुई है। किन्तु अभी भी अभीष्ट प्राप्त नही हुआ। कई महापुरुषों ने स्त्री जाति-उत्थान का बलवती अभियान चलाया। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में जब हम इन आन्दोलनों की निष्पक्ष समालोचना करते हैं तो दिखता है कि महर्षि दयाननद सरस्वती तथा उनके द्वारा संस्थापित आर्य समाज ने जो कार्य किया है वह केवल सराहनीय नहीं अपितु आज भी प्रेरक तथा अनुकरणीय है।

अंग्रेजी राज का कुछ सुपरिणाम भी हुआ। भारत में लगभग ७०० साल मुगलों ने तथा १८० वर्ष अंग्रेजों ने राज किया। अंग्रेजी राज में भारतीय समाज में निश्चित रूप से कुछ क्षेत्रों में प्रगति की इस में संदेह नहीं। पश्चिम की समाज रचना एवं विचारधारा का प्रभाव भारतीय समाज पर हुआ। इस सन्दर्भ में ब्राह्म समाज के राजा राममोहन राय समाज सुधार के अग्रणी माने जाते हैं। सती प्रथा उन्मूलन का श्रेय आपको ही दिया जाता हैं। लॉर्ड बेंटिग तथा अन्य अंग्रेजी शासकों को सती प्रथा बन्द करवाने हेतु कानून बनाने में राजा राममोहन राय १८२८ साल में सफल हुए। स्त्री जाति की प्रगति तथा विकास में सती प्रथा निषेध का स्थान महत्त्वपूर्ण है। स्त्री-शिक्षा, बालविवाह-निषेध, प्रौढ़ विवाह को प्रोत्साहन आदि कार्य भी राजा राममोहन राय ने किए। आप द्वारा स्थापित ब्राह्मो समाज बंगाल राज्य के कुछ हिस्सों तक ही सीमित रहा। जन्माधारित ब्राह्मण जाति को वरीयता देने से ब्राह्मो समाज बहुसंख्यक समाज से दूर ही रहा।

राजा राममोहन राय के पश्चात् दो महापुरुषों ने समग्र सामाजिक क्रान्ति का बिगुल बजाया। एक थे महात्मा ज्योतिराव फुले तथा दूसरे थे महर्षि दयानन्द सरस्वती।

महात्मा ज्योतिराव फुले (१८२७ से १८९०) ने सत्यशोधक समाज की स्थापना २४ सितम्बर १८७३ को की। मनुष्य विद्या प्राप्ति से, अपने गुणों से श्रेष्ठ होता है, जन्मगत जाति से नहीं इसका पुनरुच्चार करके ईश्वर और साधक भक्त के बीच पुरोहित जैसे मध्यस्थ (बिचौला) की आवश्यकता नहीं, यह सत्यशोधक संस्था की अनुधारणा थी। संस्कृत मंत्र की जगह सीधी मराठी अर्थात् क्षेत्रीय भाषा में विवाह विधि की परिपाटी सत्यशोधक समाज ने शुरू की।

स्त्री शिक्षा का महत्त्वपूर्ण कार्य महात्मा फुले ने महाराष्ट्र में सबसे पहले शुरू किया। १८४८ अगस्त में पूना में कन्या विद्यालय की स्थापना महात्मा फुले ने श्री भिडेजी के बाड़े में (बुधवारपेठ) की। भारत में कन्याओं की यह प्रथम पाठशाला है। सावित्री बाई ज्योतिराव फुले यह भारत की पहली महिला शिक्षिका हैं। कन्या विद्यालय की स्थापना शैक्षिक विश्व में क्रान्ति का सूत्रपात थी। मराठी साहित्य में नव-विचारों के पुरोधा महात्मा फुले हैं। आपने कई ग्रन्थ लिखे। वह सब ग्रंथ महाराष्ट्र सरकार ने 'समग्र फुले वाङ्.मय' में पुनर्प्रकाशित किए। प्रारम्भ के काल में सत्यशोधक समाज ने ठोस समाज सुधार का काम किया। कालान्तर में संगठन 'सत्ता-शोधक' समाज हुआ।

म. ज्योतिराव फुले

महर्षि दयाननद (१८२५ से १८८३) सरस्वती ने महाराष्ट्र में (मुंबई में) १० अप्रैल (या ७ अप्रैल?) १८७५ को आर्य समाज की स्थापना की। महाराष्ट्र प्रान्त सुधारवादी आन्दोलन का प्रारम्भ से ही गढ़ रहा है। सत्यशोधक समाज, प्रार्थना समाज, परमहंस सभा, आर्य समाज आदि सभी संस्थाओं की स्थापना महाराष्ट्र में विशेषकर मुंबई तथा पुणे में हुई। ब्राह्मो समाज केवल बंगाल में स्थापित हुआ। ब्राह्मो तथा प्रार्थना समाज केवल ईश्वर पर तथा व्यक्ति के व्यक्तिगत उन्नयन पर बल देता था। सत्यशोधक समाज और आर्य समाज ईश्वर प्रार्थना तो करता था किन्तु अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यक्रम जोर शोर से अमल में लाता था। कई रचनात्मक कार्यक्रमों को अमली जामा पहनाने में सत्यशोधक समाज और आर्य समाज अग्रणी रहे। महर्षि दयानन्द समग्र क्रान्ति के पुरोधा थे। स्त्री जाति का उत्थान इसी क्रान्ति का अटूट हिस्सा था। महर्षि की प्रेरणा से भारत में कई कन्या गुरुकुलों की स्थापना हुई। *कन्याओं को ब्रह्मवादिनी बनाने में इन गुरुकुलों का योगदान अ-भूतपूर्व तथा अ-साधारण है। आज भारत में स्त्री जाति का जो कुछ उत्थान दिखलाई देता है वह महर्षि दयानन्द तथा उनके आर्य समाज का ही ऐतिहासिक क्रान्ति कार्य है।* यह कार्य और अधिक व्यापक पैमाने पर करने की

महती आवश्यकता है। राजा राममोहन रॉय तथा महात्मा फुले, सुधारकाचार्य गोपाल गणेश आगरकर, विष्णुबुवा ब्रह्मचारी, न्या.महादेव गोविन्द रानडे, लोकहितवादी गोपाल हरि देशमुख तथा अन्यान्य आदरणीय महापुरुषों ने सामाजिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी इस में कोई मतभेद नहीं। **किन्तु समग्र एवं मौलिक परिवर्तन की दिशा में महर्षि दयानन्द ने जो दृष्टिकोण अपनाया तथा समाज क्रान्ति के लिए जो प्रेरणा दी उससे आमूलचूल परिवर्तन की प्रक्रिया गतिमान हुई। यही महर्षि के कार्य की विशेषता है। यही महर्षि का असाधारण अतुलनीय ऐतिहासिक कार्य है।**

स्त्री जाति का सम्मान बढ़ाकर समस्त महिला वर्ग में आत्माभिमान एवं अस्मिता दयानन्द ने जागृत की। महिला किसी भी दृष्टि से पुरुषों से कम नही। घर की वह केवल शोभा नही, वह परिवार की समृद्धि एवं खुशहाली की देवता है। संसार रूपी रथ का वह बराबरी का पहिया है। यह मानसिकता तथा विचारप्रवणता महर्षि दयानन्द जी की भारतीय समाज को अनूठी देन है। स्त्री जाति का उत्थान महर्षि ने जितना किया उसके तुल्य किसी ने भी नही किया। केवल महाराष्ट्र एवं मुंबई तक आर्य समाज सीमित नही रहा अपितु भारत तथा अन्य देश विदेशों में भी महर्षि का यह विचार फैल गया। मॉरीशस, अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, अफ्रीका आदि दूर दूर के देशों में महर्षि द्वारा प्रवर्तित स्त्री जाति उत्थान का कार्य प्रभावशाली सिद्ध हुआ। स्त्री जाति के प्रति महर्षि की उदार विचारधारा थी। वधू की इच्छा वर के चयन में सर्वोपरि होनी चाहिए। माता पिता की अपेक्षा स्वयं वधू वर अपना विवाह तय करें, यह महर्षि को अभिप्रेत था। 'स्वयं-वर' को आपने प्राथमिकता दी। प्रगतिशील विचारों के महर्षि आधुनिक काल के प्रणेता हैं।

आधुनिक काल में शूद्रातिशूद्र कहकर अपमानित किए गए महिला वर्ग को एवं कथित पिछड़ी जातियों को ज्ञानप्राप्ति का तथा विद्याध्ययन का अधिकार महर्षि दयानन्द ने दिलाया। **सूर्य का प्रकाश, नदी का पानी जिस प्रकार समाज के सब वर्गों के लिए खुला रहता है, उसी प्रकार ईश्वरप्रदत्त वेदज्ञान पर महिलाओं का तथा पिछड़े समझे गये बहुजन-समाज का पूर्ण अधिकार है। यह क्रान्ति का डंका आलम में ऋषि दयानन्द ने १२८ साल पूर्व बजवा दिया।** परिणामस्वरूप आज महिलाएँ प्राध्यापिका, पत्रकार, जिलाधिकारी, सेनाधिकारी, पुलिस विभाग में उच्चाधिकारी के रूप में कार्यरत दिखाई दे रही हैं। महिलाओं में क्षात्रतेज विद्यमान रहता है। कैकेयी, झाँसी की रानी, दुर्गावती तथा अन्य आर्य महिलाओं ने रणक्षेत्र में अतुलनीय साहस और धैर्य का परिचय दिया है। पूर्व काल की यह देदीप्यमान परम्परा परिवर्तन सद्यकालीन स्थिति में भी मादाम कामा, इन्दिरा गांधी, सरोजनी नायडू, कैप्टन लक्ष्मीदेवी सहगल आदि ने पुनरुज्जीवित की।

विधवा विवाह, बालविवाह-प्रतिबन्ध, सतीप्रथा का खण्डन, कन्या का वेदाध्ययन का अधिकार, गुणकर्म स्वभाव के अनुरूप वर का चयन करने का वधू को अधिकार दिलाना आदि क्षेत्रों में विवेकनिष्ठा से महर्षि ने मार्गदर्शन किया। केवल विचारों का प्रचार करने तक ही अपना कार्य सीमित न रखकर आर्य समाज के माध्यम से इस युगकारी परिवर्तन को महर्षि ने साकार किया।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में नारी जाति के सर्वांगीण विकास पर दृष्टिपात करने से हमें पता चलता है कि कट्टरपंथी स्थितिशील समाज का परिवर्तनशील गतिमान समाज में रूपान्तर करने में उन्नीसवीं शताब्दी में सर्वाधिक प्रभावशाली कदम महर्षि दयानन्द ने ही उठाए हैं। इस महान् युगद्रष्टा को समाज के सभी वर्गों को विशेषकर स्त्री जाति को वारम्बार नमन करना चाहिए।

– प्राचार्य देवदत्त तुंगार, महाराष्ट्र

❑❑❑

ARTHUR SCHOPENHAUER

- COMPASSION IS THE BASIS OF MORALITY.
- WICKED THOUGHTS AND WORTHLESS EFFORTS GRADUALLY SET THEIR MARK ON THE FACE, ESPECIALLY THE EYES.
- ALL TRUTH PASSES THROUGH THREE STAGES. FIRST, IT IS RIDICULED. SECOND, IT IS VIOLENTLY OPPOSED. THIRD, IT IS ACCEPTED AS BEING SELF-EVIDENT.
- A MAN CAN BE HIMSELF ONLY SO LONG AS HE IS ALONE

न्यास समाचार :
आज देश में सर्वत्र भ्रष्टाचार, कदाचार से ओतप्रोत परिवेश नजर आता है। राम कृष्ण का यह प्यारा देश जो पूरे विश्व को सदाचार की शिक्षा देता था। आज स्वयं प्रश्नों के घेरे में है। इसके मूल में नितान्त भौतिकता की ओर अग्रसर होना है, यह विचार आर्ष पद्मिनी कन्या गुरुकुल, चित्तौड़ के अधिष्ठाता स्वामी (डॉ.) ओमृ आनन्द सरस्वती ने व्यक्त किए।

सत्यार्थ-सौरभ का वार्षिक समीक्षा सत्र- न्यास के मासिक मुख-पत्र 'सत्यार्थ-सौरभ' के एक वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर आयोजित समीक्षा-सत्र में वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. अजित गुप्ता ने उपयोगी सुझाव रक्खे।

ऑन लाइन प्रतियोगिता का लोकार्पण- वैदिक संस्कृति पर आधारित समरसता प्रवाहित करने वाली शिक्षाओं को जन-जन तक प्रसारण की अत्यन्त आवश्यकता का अनुभव करते हुए श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास की 'ऑन लाइन प्रतियोगिता ' का लोकार्पण (डॉ.) ओमृ आनन्द सरस्वती, श्री सुरेश मित्तल-फतहनगर, श्री मोती लाल आर्य-आबूरोड़ द्वारा किया गया। इस अवसर पर न्यास के कार्यकारी अध्यक्ष अशोक आर्य ने बताया कि आर्यरत्न (डॉ.) ओमृ प्रकाश (म्यंमार) की स्मृति में 5100/- का पुरस्कार भी दिया जावेगा।

पाठ्य सामग्री भी न्यास की बेवसाईट-www.satyarthprakashnyas.org पर निःशुल्क उपलब्ध है। आयुसीमा का कोई बन्धन नहीं रक्खा है।

सम्पादक का लोकाभिनन्दन- इस अवसर पर 'सत्यार्थ-सौरभ' पत्रिका के सम्पादक अशोक आर्य का नगर के आर्यों, संस्थाओं द्वारा शॉल-श्रीफल भेंट कर लोकाभिनन्दन किया गया। (डॉ.) ओमृ आनन्द सरस्वती ने कहा कि सत्यार्थ-सौरभ को एक वर्ष में ही आर्यजगत् की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका की पंक्ति में ला खड़ा करने का श्रेय सम्पादक अशोक आर्य को जाता है। आर्य समाज फतहनगर, आर्य समाज सनवाड़, आर्य समाज हिरणमगरी व नगर के आर्यों की ओर से अशोक आर्य का अभिनन्दन किया गया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. अमृतलाल तापड़िया ने किया। सभा प्रारम्भ होने पर सभी का स्वागत न्यास- मन्त्री भवानीदास आर्य ने किया। सर्वाधिक सदस्य बनाने हेतु बाबू मिठाईलाल सिंह (मुम्बई), श्री विजय शर्मा (भीलवाड़ा) को धन्यवाद ज्ञापित किया गया तथा श्रीमती शारदा गुप्त व श्रीमती नीता गर्ग (उदयपुर) का अभिनन्दन किया गया।

आर्य समाज,नीमच का संभागीय सम्मेलन सम्पन्न

आर्य समाज,नीमच के तत्वावधान में दिनांक १६.१२.१२ को रतलाम संभाग का संभागीय सम्मेलन सम्पन्न हुआ। संभागीय प्रधान श्री भगवान दास अग्रवाल ने आर्य समाज के नियम उपनियमों पर विस्तार से चर्चा की और इन्हें दृढ़तापूर्वक अपने जीवन में उतारने की प्रेरणा दी। कार्यक्रम में रतलाम,मन्दसौर,नीमच,झाबुआ जिले के ७० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। -अर्जुन लाल नरेला,प्रधान,आर्य समाज,नीमच

आर्य समाज,बारां का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज,बारां का वार्षिकोत्सव दिनांक १४ से १६ दिसम्बर २०१२ तक भव्यतापूर्वक मनाया गया। इसमें अनेक विद्वानों व भजनोपदेशकों ने अपनी प्रस्तुतियाँ दीं। जिनमें प्राध्यापक ओम कुमार आर्य,जीन्द,हरियाणा, बहिन सुदेशा,संगीताचार्य(दिल्ली),आचार्य अग्निमित्र शास्त्री(कोटा) के नाम उल्लेखनीय हैं। इस अवसर पर जिला आर्य प्रतिनिधि सभा कोटा के प्रधान श्री अर्जुनदेव चड्ढ़ा,मंत्री श्री कैलाश बाहेती, श्री रामप्रसाद याज्ञिक व श्री रमेश गोस्वामी उपस्थित रहे।

-हेमेन्द्र विजय,मंत्री,आर्य समाज,बारां

आर्य केन्द्रीय सभा,गुडगाँव द्वारा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती का बलिदान समारोह मनाया गया।

'आर्य समाज को नेताओं की नहीं सेवकों की आवश्यकता है।' यह शब्द थे स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती जी के। इन शब्दों को साकार रूप देने के लिए सेवा भावना को प्रमुख रखते हुए आर्य केन्द्रीय सभा गुडगाँव एवं आर्य समाज,नई कॉलोनी, गुडगाँव के संयुक्त तत्वावधान में यह कार्यक्रम भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। शोभायात्रा एवं श्रद्धांजलि समारोह के अतिरिक्त सेवा दिवस के रूप में समाज के पीड़ित लोगों की सहायतार्थ विशेष कार्यक्रम २२ दिसम्बर २०१२ को दशहरा ग्राउण्ड नई कॉलोनी,गुडगाँव में सम्पन्न हुआ।

-कन्हैया लाल आर्य,प्रधान

एक अपील

प्रायः लोग स्वामी प्रवासानन्द(पूर्व नाम राजपाल,भारत यात्री)के मिशनरी कार्यों से परिचित हैं। आपने रेल,बस मोटरसाइकिल व साइकिल से वैदिक संस्कृति की दुन्दुभी चहुंओर बजायी है। आप अभी भी स्वस्थ हैं एवं कार्य कर रहे हैं। इन्हें अर्थ सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है। दानीजन कृपया भारतीय स्टेट बैंक की खाता सं. ३१०६०१६६७६४ में अपना सहयोग जमा कराने की कृपा करें। -रामदेव शास्त्री,आचार्य,टंकारा

जन्मशती का आयोजन

आर्य समाज,भीमगंज मण्डी,कोटा जंक्शन के मंत्री व अन्य पदों पर रह चुके स्वर्गीय रामनारायण जी की जन्मशती का आयोजन उनके सुपुत्र श्री धीरेन्द्र गुप्ता ने अपने निवास पर अत्यन्त श्रद्धापूर्वक किया। स्वर्गीय रामनारायण जी हाड़ौती क्षेत्र में अपने प्रेरक प्रवचनों के लिए और यज्ञमय जीवन के लिए जाने जाते रहे हैं।

-राजेन्द्र आर्य,पूर्व मंत्री,आर्य समाज,भीमगंज मंडी,कोटा

वाई फाई से नपुंसकता

वर्जीनिया मेडिकल स्कूल के शोधकर्ताओं द्वारा किए गए एक अन्वेषण के अनुसार वाई फाई टेक्नोलॉजी से जुडे लेपटॉप एवं कम्प्यूटर से इण्टरनेट सर्फिंग करने वालों के शरीर में शुक्राणाओं की गतिविधि मन्द पड़ जाती है, इससे पुरुषों के पिता बनने के अरमानों पर भी पानी फिर सकता है। शोध के अनुसार वाई फाई तकनीक से निकलने वाला विद्युत चुम्बकीय विकिरण शुक्राणाओं के अस्तित्व के लिए खतरनाक है,जो पुरुष कई घण्टे तक इस तकनीक से जुड़े कम्प्यूटर और लैपटॉप से इण्टरनेट सर्फिंग करते हैं, उनके शरीर में विद्यमान शुक्राणु न केवल निष्क्रिय हो जाते हैं बल्कि उनका डीएनए भी नष्ट हो जाता है और नपुंसकता का खतरा बढ़ जाता है।

ब्रह्माण्ड में पृथ्वी जैसे निवास-योग्य कई ग्रह हैं

खगोल वैज्ञानिकों की एक अन्तर्राष्ट्रीय टीम के अनुसार मनुष्य ब्रह्माण्ड में विद्यमान ऐसे कई ग्रहों पर जिंदगी जी सकता है, जो पृथ्वी से मिलते-जुलते हैं, कोई ग्रह रहने के योग्य है या नहीं, यह पता लगाना खगोल विज्ञान के लिए एक चुनौती है।

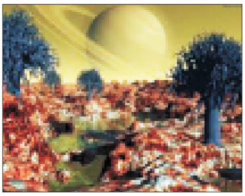

शोध दल के प्रमुख प्रोफेसर चार्ली लाइवीबर के अनुसार हाल ही में कई ऐसे ग्रह पाए गए हैं, जहाँ ऐसा माहौल पाया गया है जहाँ जीवनयापन सम्भव है, इनमें कई ऐसे ग्रह हैं,जो एक जैसे हैं और पृथ्वी से मेल खाते हैं, इससे पृथ्वी के बाहर भी जीवन जीने की सम्भावनाएँ बढ़ गई हैं, रहने के लिए सर्वश्रेष्ठ माहौल का अनुमान तो पृथ्वी से ही लगाते हैं जिसे हम सबसे अधिक जानते हैं। प्रोफेसर लाइवीबर ने कहा है कि रहने योग्य अथवा नहीं रहने योग्य की पहचान हम पृथ्वी से तुलना करके कर सकते हैं कि जिंदगी जीने योग्य श्रेष्ठ स्थितियाँ कहाँ हैं? जिन्दगी बिताने के लिए पानी, सामान्य तापमान और ऊर्जा का स्रोत होना आवश्यक है।

गरीबी दिखे नहीं

बीजिंग- चीन के गांसू प्रांत में प्रशासन ने राजमार्ग से लगे एक छोटे से गाँव और उसकी बदहाल स्थिति को छिपाने के लिए राजमार्ग के किनारे पाँच किलोमीटर लम्बी दीवार का निर्माण किया है।

समाचार पत्र पीपुल्स डेली ने मंगलवार को अपनी रपट में बताया कि डिंगसी शहर के नजदीक एक गांव दो मीटर ऊँची और पाँच किलोमीटर लम्बी दीवार के निर्माण के बाद राजमार्ग पर गुजरने वाले वाहनों से छिप गया है। दीवार में हालाँकि प्रत्येक चार मीटर की दूरी पर रास्ता छोड़ा गया है, ताकि स्थानीय लोग राजमार्ग पर आ सकें। दीवार बनाने का काम अक्टूबर में शुरू हुआ था और स्थानीय लोगों को बताया गया था कि यह निर्माण गरीबी दूर करने की योजना के तहत किया जा रहा है। कुछ हफ्तों बाद वे यह जानकर भौंचक रह गए कि दीवार का निर्माण केवल उनके गाँव की गरीबी को छिपाने के लिए किया गया है।

श्रीजी हुज़ूर अरविन्द सिंह जी मेवाड़

सत्यार्थ-सौरभ एक उपयोगी पत्रिका है इसके एक वर्ष पूर्ण होने पर हार्दिक शुभकामनाऐं।

प्रतिस्वर

First off all thanks a ton and I appriciate you from my heart for publishing a monthly magazine based on true ved, Maharshi Dayanand's works. I was looking for that kind of monthly magazine from long time.

Ramshwer Gupta
New jearsy

श्रीयुत् अशोक आर्य जी, मैं सत्यार्थ-सौरभ का आजीवन सदस्य हूँ और मुझे पत्रिका नियमित समय से प्राप्त हो रही है यह हर्ष का विषय है कि पत्रिका का प्रकाशन बहुत ही कुशलता के साथ हो रहा है क्योंकि पत्रिका महर्षि दयानन्द के मंतव्यों के अनुकूल है इसके अन्दर ज्ञान वर्धक सामग्री प्रदान की जा रही है उसके लिए आप अनेकानेक हार्दिक बधाई तथा शुभ कामनाओं के अधिकारी हैं। आपसे निवेदन है कि पत्रिका में प्रकाशित लेखकों के पत्र व्यवहार का पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य दें।

राजेश गुप्त, हापुड़

श्रीमान् अशोक आर्य, न्यास की पत्रिका सत्यार्थ-सौरभ नियमित प्राप्त हो रही है। पत्रिका का कलेवर एवं उसमें संकलित सामग्री उच्च कोटि की है। पत्रिका के १ वर्ष पूर्ण होने पर मेरी ओर से प्रकाशक मण्डल को हार्दिक धन्यवाद एवं मुझे आशा है कि पत्रिका की यह यात्रा अनवरत जारी रहेगी। मैंने पत्रिका को पढ़ा है। धार्मिक एवं आध्यात्मिक संकलन से युवा पीढ़ी को एक नया मार्गदर्शन मिलेगा। शुभकामनाओं सहित।

रघुवीर सिंह मीणा
सांसद, उदयपुर (राजस्थान)

सत्यार्थ प्रकाश महर्षि दयानन्द के क्रांतिकारी विचारों, भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति और वर्तमान काल की चुनौतियों पर विचारपरक लेखों के कारण संग्रहणीय पत्रिका बन गई है। यह परिवार के सभी सदस्यों के लिए उपयोगी है। योग, ध्यान एवं स्वास्थ्य पर स्तरीय आलेखों से पत्रिका अधिक उपयोगी बनेगी।

किरण माहेश्वरी, सांसद, राजसमन्द

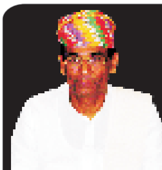

आचार्य श्रोत्रिय जी विदेश यात्रा पर

प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय वैदिक धर्म के प्रचारार्थ आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड की २१ दिवसीय यात्रा पर रवाना।

सत्यार्थ-पीयूष

वीर्य रक्षा एवं ब्रह्मचर्य्य का महत्व

माता पिता और आचार्य बचपन के प्रारम्भ से ही बालकों को यह निर्देश कर दें कि वीर्य रक्षा ही ब्रह्मचर्य है। बिना ब्रह्मचर्य व्रत धारण किये विद्याध्ययन में पूरी तरह से सफलता नहीं मिलती। इस विषय में स्वामी दयानन्द लिखते हैं- ''देखो जिसके शरीर में सुरक्षित वीर्य रहता है तब उसको आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के बहुत सुख की प्राप्ति होती है। अतः उपस्थेन्द्रिय के स्पर्श और मर्दन से वीर्य की क्षीणता, नपुंसकता, तथा विषयों की कथा, विषयी लोगों का संग, विषयों का ध्यान, स्त्री की निकटता और सम्भाषण से मन चलायमान हो जाता है।'' इसलिए सदैव इस कृत्य से पृथक् रहे। क्योंकि सब उन्नति का मूल शरीर रक्षा अर्थात् शरीर को स्वस्थ रखना है। जिसका शरीर स्वस्थ नहीं होता है वह संसार में कुछ भी नहीं कर सकता। संयमित उपभोग और नियमित जीवन से ही शरीर पुष्ट और बलवान होता है। ऐसे ही शरीर में स्वस्थ आत्मा और मन निवास करता है।

यहाँ महर्षि जी ने माता-पिता तथा आचार्य के सन्तान विषयक कर्त्तव्यपालन की अवधि भी निश्चित करा दी है। पाँचवें वर्ष तक बालक माता के समीप ही रहेगा तथा उसी के निर्देशन में अपने आचार की शिक्षा ग्रहण करेगा। छठे वर्ष में पिता को भी इस कार्य में संयुक्त किया जाना चाहिए। नवें वर्ष तक आते आते बालक को यज्ञोपवीत दिलाकर गुरुकुल में भेजने का समय आ जाता है अतः नवें वर्ष से लेकर स्नातक बनने तक वह छात्र अपने आचार्य के सान्निध्य में रहेगा। **यदि सन्तान को एक सफल तथा उत्कृष्ट जीवन यापन के लिए प्रशिक्षित करना है तो दयानन्द कृत उपर्युक्त विधान को स्वीकार करना ही होगा।**

प्रायः देखा जाता है कि बालकों को लाडप्यार में रखकर उन्हें बिगाड़ देने की जिम्मेदारी भी माता-पिता की ही होती है। बाल मनोविज्ञान की जानकारी न रखने वाले लालन और ताड़न (प्यार करने और दण्डित करने) की सीमारेखा से अपरिचित होते हैं। ऐसे लोगों को महर्षि पतञ्जलि की निम्न उक्ति का स्मरण रखना चाहिए-

सामृतैः पाणिभिर्घ्नन्ति गुरवो न विषो क्षितैः।
लालनाश्रयिणो दोषास्ताडनाश्रयिणो गुणाः॥

यदि माता-पिता और आचार्य यथावसर बालक की ताड़ना भी करते हैं तो इसमें उनकी भावना को ही समझना चाहिए। व्यर्थ लाड़ प्यार बालक को बिगाड़ देता है।

बालकों को सदाचार की शिक्षा देना भी आवश्यक है। वे आलस्य, प्रमाद, मादक द्रव्य सेवन, हिंसा, क्रूरता आदि दोषों से बचें तथा सत्यभाषण, सत्याचरण, प्रतिज्ञा पालन और समयपालन के महत्व को जानें। अपने से छोटों, बराबर वालों तथा बड़ों के प्रति मान सम्मान प्रकट करना भी शिष्टाचार का मूलमंत्र है।

अभिवादन का प्रकार- परस्पर अभिवादन तथा सम्मान प्रकट करने की प्रणाली का विचार भी आवश्यक है। प्राचीन आर्य शास्त्रों में 'नमस्ते' एक आदर्श अभिवादन माना गया है। वेदों में इसी का प्रयोग हुआ है- 'नमस्ते रुद्रमन्यवे' (यजु. १६/१) उपनिषदों में गार्गी द्वारा याज्ञवल्क्य को नमस्ते करने का उल्लेख मिलता है।

'स हो वाच नमस्ते याज्ञवल्क्याय' (वृहदारण्यक उपनिषद्)। कठोपनिषद् में यम द्वारा नचिकेता को नमस्ते द्वारा सम्मान प्रदर्शित करने का प्रसंग आया है- *'नमस्ते ब्रह्मन् स्वस्ति मेऽस्तु।'* इसी प्रकार गीता में अर्जुन द्वारा कृष्ण को नमस्ते करना बताया गया है।

पं. अयोध्याप्रसाद (वैदिक मिश्नरी) जब अखिल विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने १९३३ में अमेरिका गये तो वहाँ उन्होंने सम्मेलन के प्रतिनिधियों को दोनों हाथों को जोड़कर उन्हें अपने हृदय तक लाकर तथा सिर झुका कर 'नमस्ते' किया। प्रतिनिधियों के जिज्ञासा करने पर पं. अयोध्याप्रसाद ने इस आर्य अभिवादन की इस प्रकार व्याख्या की- "with all the might in my arms, with all the feeling in my heart and with all the wisdom in

my mind, I bow before you and show my respect" मेरी भुजाओं में जो शक्ति है, मेरे अन्तस्थल में जो भाव हैं तथा मेरे मस्तिष्क में जो बुद्धि है, उन सबको समन्वित कर, मैं आपके प्रति अपना आदर प्रकट करता हूँ।

वस्तुतः बालक को परिपूर्ण मानव बनाने की प्रक्रिया में माता-पिता तथा आचार्य को जिस मौलिक बात का ध्यान रखना है वह तैत्तिरीयोपनिषद् के निम्न वाक्य में कह दी गई है- **'यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि'।** अर्थात् जो हमारे सुचरित हैं, उन्हीं का सेवन, पालन तथा अनुकरण तुम्हें करना है। हम में जो दोष हैं उनका भूल कर भी अनुसरण न करें।

इस प्रकार यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण प्राचीन, अर्वाचीन और आधुनिक भारतीय एवं विदेशी धार्मिक साहित्य में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश ही एक मात्र ऐसा ग्रन्थ है जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अर्थात् पुरुषार्थ चतुष्टय के अनुसार समीक्षात्मक ढंग से व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व निर्माण का चिन्तन प्रस्तुत कर मानव मात्र को यह उपदेश दिया गया है कि वे विश्वासों के नाम पर फैले अन्धविश्वासों, धर्म के नाम पर फैले अधर्मों-पाखण्डों, ईश्वर उपासना और पूजा के नाम पर फैले पत्थर एवं व्यक्ति पूजाओं, आचारों के नाम पर फैले अनाचारों, आर्ष और वैदिक मान्यताओं के नाम पर फैली अनार्ष और अवैदिक मान्यताओं आदि के अन्तर को समझें और सचेत रहें कि वे किन्हीं अन्धविश्वासों, पाखण्डों, जड़पूजाओं और अनार्ष और अवैदिक मान्यताओं आदि में न स्वयं फँसें और न अपनी सन्तान को फँसने दें। ताकि हमारी भावी पीढ़ी योग्य, संस्कारवान्, विवेकशील अर्थात् सर्वदृष्टिकोण से सम्पुष्ट हो सके।

मानव निर्माण का प्रथम सोपान अर्थात् सन्तान निर्माण एक नाजुक विषय है उसे चिन्तन की किसी विशिष्ट सीमा में नहीं बाँधा जा सकता और न कोई रेखा खींची जा सकती है कि बस इतना ही। फिर भी स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास में जिस गम्भीरता और सूक्ष्मता से इस विषय के प्रमुख मुद्दों को हमारे सामने प्रस्तुत किया है अन्यत्र ऐसा प्रस्तुतिकरण देखने को नहीं मिलता। इसमें किसी विशिष्ट देश, समाज, धर्म, मत-मजहब और सम्प्रदायवाद की तनिक भी गन्ध नहीं आती है। ऋषि ने यह प्रस्तुतिकरण केवल आर्यावर्त्त या भारत वालों के हित में ही किया हो कि केवल भारत में ऐसा मानव निर्माण हो, ऐसी बात नहीं है। अपितु उन्होंने तो देश जाति, सम्प्रदाय, भाषा, क्षेत्र आदि से परे होकर मनुष्य मात्र को यह सन्देश दिया है कि उत्तम मानव-निर्माण कहाँ से और किस प्रकार प्रारम्भ हो।

काश! आज राष्ट्र में, महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास में जो मानव निर्माण के लिए शिक्षा का निर्देश दिया है वह प्रचलित होती तो हमारा भारत देश बलात्कार, भ्रूण हत्या, दहेजप्रथा, देवदासी प्रथा, फलित ज्योतिष, हवाला, घोटाला, रिश्वतखोरी और चार सौ बीसी जैसी बुराईयों से मुक्त होता। आज संसार के मानचित्र पर महर्षि मनु के अनुसार विश्वगुरू कहलाने वाला भारत "घोटालों का देश" की संज्ञा से पुकारा जा रहा है। इस तरह की शर्मनाक स्थिति से बचने के लिए माता-पिता एवं आचार्यों का कर्त्तव्य बनता है कि मानव निर्माण की महर्षि दयानन्द की क्रान्तिकारी प्रक्रिया को अपनाकर पुनः राष्ट्र में राम, कृष्ण एवं आचार्य चाणक्य आदि जैसे कुशल राजनीतिक एवं कपिल, कणाद, गौतम, पतञ्जलि, जैमिनी, पाणिनी व वेदव्यास जैसे ऋषियों तथा भगतसिंह, चन्द्रशेखर, सुभाष चन्द्र बोस, अजीतसिंह, सावरकर, बालकृष्ण आदि जैसे देश भक्तों का निर्माण करें, जिससे भारत राष्ट्र अपनी खोयी हुई अस्मिता को पुनः प्राप्त कर सके।

महर्षि द्वारा प्रतिपादित शिक्षा प्रणाली सार्वभौम है। संसार के सभी राष्ट्र इसे अपना कर मनुर्भव (ऋ. १०/५३/६) के आदेश के अनुरूप मानव का निर्माण कर सकते हैं।

- संपादक-अशोक आर्य, नवलखा महल, उदयपुर

❑❑❑

न्यास द्वारा समस्त संस्कारों हेतु समुचित व्यवस्था

जीवन में उदात्त नैतिक मूल्य स्वयमेव स्थापित नहीं होते, भागीरथ प्रयत्न करना होता है। भारतीय मनीषा ने इस हेतु १६ संस्कारों का विधान किया है। जो प्रत्येक गृहस्थ को करवाने चाहिए। कई सज्जनों को लगता है कि यह कठिन तथा व्यय-साध्य कार्य है। हमारा निवेदन है कि ऐसा कुछ नहीं है। संस्कार चित्त-प्रसाद-अभिवृद्धि का हेतु है। आप केवल दूरभाष पर अपनी अभिलाषा बतावें। न्यास के पुरोहित पंडित नवनीत आर्य सारा कार्य, स्वतः व्यवस्था कर सुन्दरता से सम्पन्न करायेंगे।

दूरभाष : ०२६४-२४१७६६४, चलभाष ०९३१४५३५३७९

कृपया न्यास की वेबसाईट : www.satyarthprakashnyas.org पर अवश्य देखें

पत्रिका से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी/शिकायत के लिये निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें।

09314535379

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक भी पत्रिका न मिलने पर कृपया इसी चलभाष पर सम्पर्क करें।

चक्रकीर्ति सामवेदी

साइलेण्ट स्क्रीम (गूंगी चीख)

''अमेरिका में सन् १९८४ में एक सम्मेलन हुआ था- 'नेशनल राइट्स टू लाईफ कन्वेन्शन।' इस सम्मेलन में एक प्रतिनिधि ने डॉ. बर्नार्ड नेथेनसन द्वारा गर्भपात की बनाई गई एक अल्ट्रासाउण्ड फिल्म 'साइलेण्ट स्क्रीम' (गूंगी चीख) का जो विवरण दिया था, वह इस प्रकार है- गर्भ की वह मासूम बच्ची अभी दस सप्ताह की थी वह काफी चुस्त थी। हम उसे अपनी माँ की कोख में खेलते करवट बदलते व अगूंठा चूसते हुए देख रहे थे। उसके दिल की धड़कनों को भी हम देख पा रहे थे और वह उस समय १२० की साधारण गति से धड़क रहा था। सब कुछ बिल्कुल सामान्य था, किन्तु जैसे ही पहले औजार (सक्शन पम्प) ने गर्भाशय की दीवार को छुआ तक भी नहीं था, लेकिन उसे अनुभव हो गया था कि कोई चीज उसकी आरामगाह, उसके सुरक्षित क्षेत्र पर हमला करने का प्रयत्न कर रही है।

हम दहशत से भरे यह देख रहे थे कि किस तरह वह औजार उस नन्हीं-मुन्नी मासूम गुड़िया सी बच्ची के टुकड़े-टुकड़े कर रहा था। पहले कमर, फिर पैर आदि से टुकड़े ऐसे काटे जा रहे थे जैसे वह जीवित प्राणी न होकर कोई गाजर-मूली हो और वह बच्ची दर्द से छटपटाती हुई, सिकुड़कर घूम-घूमकर तड़पती हुई इस हत्यारे औजार से बचने का प्रयत्न कर रही थी वह इस बुरी तरह डर गई थी कि एक समय उसके दिल की धड़कन २०० तक पहुँच गयी। मैंने स्वयं अपनी आँखों से उसको सिर पीछे छटकते हुए व मुँह खोलकर चीखने का प्रयत्न करते हुए देखा, जिसे डॉक्टर नेथेनसन ने उचित ही 'गूंगी चीख' या 'मूक पुकार' कहा है। अन्त में हमने वह नृशंस व वीभत्स दृश्य भी देखा, जब संडासी उसकी खोपड़ी को तोड़ने के लिए तलाश रही थी और सिर दबाकर उस कठोर खोपड़ी को तोड़ रही थी, क्योंकि सिर का वह भाग बगैर तोड़े सक्शन ट्यूब के माध्यम से बाहर नहीं निकाला जा सकता था।'

हत्या के इस वीभत्स खेल को सम्पन्न करने में करीब पन्द्रह मिनट का समय लगा और इसके दर्दनाक दृश्य का अनुमान इससे अधिक और कैसे लगाया जा सकता है कि जिस डॉक्टर ने यह गर्भपात किया था और जिसने मात्र कौतुहलवश इसकी फिल्म बना ली थी, उसने जब स्वयं इस फिल्म को देखा तो वह अपना क्लीनिक छोड़कर चला गया और फिर वापस नहीं आया।''

नई तकनीकें अस्तित्व में आईं तो नये तरीके भी अस्तित्व में आने लगे। स्त्री के गर्भ में ही कन्या भ्रूण की पहचान कर ली जाती है और उस अजन्मी कन्या के गर्भ में टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाते हैं।

भौतिकता की दौड़ में चिकित्सक नंगे हो रहे हैं। जरा चिकित्सकों की इस भाषा पर ध्यान दें:-

१. ''वो थोड़ी देर रोएगी, लेकिन जिन्दा नहीं रहेगी'' २. ''इस तरह होता रहा'' ३. ''हम करते आये हैं, परेशानी की कोई बात नहीं''

४. ''कहीं भी गढ़ढा खोदकर गाढ़ देना'' ५. ''पहले मरा हुआ साबित करना होगा, फिर हम आसानी से गर्भपात कर देंगे''

ये उन चिकित्सकों के वाक्य हैं जो उन्होंने गर्भपात कराने वाली महिलाओं से कहे हैं। ये दरिन्दे चिकित्सक मात्र रुपये १५००/- में गर्भ में पल रही कन्या भ्रूण की हत्या करने को तैयार हैं। वर्तमान समय में कन्या भ्रूण हत्या एक अत्यन्त गंभीर समस्या के रूप में हमारे समाज के समक्ष मुँह बाऐ खड़ा है। इस समस्या से सम्पूर्ण राष्ट्र चिन्तित है, परन्तु आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए बनाया गया कानून पीएनडीटी एक्ट, १९९४ इस दिशा में गत १२ वर्षों में भी कोई सार्थक परिणाम नहीं दे पाया।

कन्या भ्रूण हत्या व नवजात कन्या शिशु हत्या से देश में स्त्री-पुरुष जनसंख्या का अनुपात चरमरा गया है। यह तथ्य महिलाओं पर बढ़ रहे यौन उत्पीड़न, बलात्कार, दहेज हत्या, तेजाब फेंकने, जहर देने, मानसिक यातना देने आदि कृत्यों से स्पष्ट परिलक्षित होता है। महिलाओं के प्रति बढ़ रहे शारीरिक व मानसिक यातनाओं से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि हमारे समाज में जहाँ एक तरफ तो लक्ष्मी, सरस्वती व दुर्गा की आराधना होती है वहीं दूसरी ओर सम्पूर्ण समाज भौतिकवाद, उपभोक्तावाद, दहेज, कर्मकाण्ड आदि की आड़ में उसी की भ्रूण-हत्या, शिशु-हत्या जैसे जघन्य शर्मनाक कृत्यों में संलग्न है।

क्रमशः ......

तू कहती कागद की लेखी, मैं कहती आँखिन की देखी

गणेश चतुर्थी के अगले दिन दूरदर्शन पर समाचार आ रहा था कि गणेश भगवान जी की सवारी विसर्जन हेतु समुद्र तट पर ले जाई जा रही थी कि एक बाइक सवार ने उन्हें टक्टर मार दी। मूर्ख आदमी स्वयं तो जान से गया ही साथ ही विघ्न-नाशक गणेश जी का सिर भी धड़ से अलग हो गया। मेरे मुँह से अनायास निकल पड़ा- हे भगवान! विघ्न-नाशक की शोभा यात्रा में विघ्न!

५, ६ वर्ष पूर्व की बात है २६ जुलाई का दिन था, मैं बम्बई में जुहु रोड़ स्थित अपनी बहन के घर से सांताक्रुज आर्य समाज जा रही थी कि बहुत तेज वर्षा होने से सड़कों पर बाढ़ आ गई। मेरा ऑटो उस बाढ़ में फँस गया। मैं चार घण्टे तक उस बाढ़ में फँसी रही। ऑटो चालक को विनोदप्रियता सूझी। वह कहने लगा-माता जी! यह बम्बई वाले प्रति वर्ष अपने सूंड वाले भगवान जी को समुद्र में डुबाते हैं इसलिए इस वर्ष समुद्र ने इन्हें डुबा दिया।

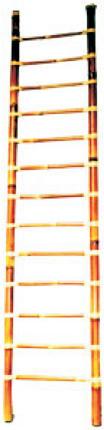

मैं कुछ दिन पूर्व एक आर्य समाजी मित्र के दाह संस्कार में गई। इसके एक वर्ष पूर्व उनकी पत्नी का भी देहान्त हो चुका था। दोनों की मृत्यु कैंसर के रोग से ही हुई थी। शमशान गृह पहुँचे ही थे कि मित्र की बहन बोली- अरे पीढ़ी तो लानी रह गई, कोई दौड़ कर घर जाओ पीढ़ी लाओ। मैंने पूछा यहाँ शमशान में पीढ़ी का क्या बनेगा?लोग कहने लगे कि क्योंकि इनके परिवार में दो व्यक्तियों की मृत्यु कैंसर के ही रोग से हो चुकी है, अतः यह रोग आने वाली पीढ़ियों में न आए, इसलिए शव के साथ पीढ़ी जलाई जाएगी। मुझे उनकी सोच पर आश्चर्य हुआ कि क्या परमात्मा को पीढ़ी (आसन) तथा पीढ़ी (Generation) का अन्तर नहीं पता या ये लोग भगवान को मूर्ख बनाने का प्रयास कर रहे हैं?

दो तीन वर्ष पूर्व मेरे नगर में पेपर मिल कालोनी में रामलीला हो रही थी। रामलीला प्रधान का ६ वर्षीय बालक दीपक मिश्रा मंच पर जाकर रावण का अभिनय कर रहे व्यक्ति से पूछने लगा- रावण दादा! आप अपने दो हाथों से अपने दस मुखों को कैसे धोते हैं?यदि सर्दी लगने से आपकी दसों नाकों से पानी बहने लगे तो कैसे साफ करते हैं?सोते समय जब आप करवट लेते होंगे तब तो आपका आधा धड़ ही बिस्तर से ऊपर उठ जाता होगा, आपको नींद कैसे आती है? मुझे लगा कि यह बच्चा तो वृद्ध नहीं है परन्तु यहाँ उपस्थित वृद्ध भी बच्चे हैं, जो तोता मैना की कहानियों से बहल जाते हैं।

बीस वर्ष पूर्व श्री स्व. ल. जी. मेरे नगर के आर्य समाज के प्रधान थे। उस समय विश्वास मत के संचालक श्री विश्वात्मा बावरा जी पेपर मिल के मैनेजर श्री सहगल जी के यहाँ प्रायः आया करते थे। एक दिन मैं भी उनसे मिलने सहगल जी के घर पहुँच गई। वह बावरा जी से कहने लगे-बावरा जी एक भूतनी प्रतिदिन रात के समय मेरे तकिये के नीचे एक दस का नोट रख जाती है। आप यह दस-दस के सौ नोट, जो भूतनी के दिए हुए हैं, रख लीजिये और मुझे उस भूतनी से छुड़ा दीजिये। मैं कहना चाहती थी कि लाला जी! आप उस भूतनी से मेरा परिचय करा दीजिए परन्तु मैंने स्वयं पर काबू पा लिया। यह घटना बावरा जी की जीवनी में भी लिखी हुई है।

वर्ष १९९० की बात है मेरे पड़ोस में एक युवा महिला रहती थी। उसका बारहवीं कक्षा में पढ़ने वाला पुत्र मुझसे हिन्दी विषय पढ़ने आ जाता था। एक दिन मैं पाठ्य पुस्तक में एक कहानी 'बूढ़ी काकी' के अभ्यास के प्रश्न कराते समय

प्रसंगवश कुछ अधिक ही कह गई। कुछ देर पश्चात् वह महिला (श्रीमती स. गुप्ता) तमतमाती हुई मेरे पास आकर कहने लगीं-मेरे पुत्र अजय को पाठ्य पुस्तक के अतिरिक्त यदि आप कुछ सिखा सकती हैं तो उसे प्रैक्टिकल होना सिखाइये, जमाना बड़ा जालिम है, यह बोध कथाएँ तो आप अपनी पाठशाला में ही पढ़ाइये। आज अजय खूब प्रैक्टिकल हो गया है। श्रीमती स. गुप्ता पक्षाघात से पीड़ित लड्ढाराम वृद्धाश्रम करनाल में जीवन के दिन गिन रही हैं। अजय का कहना है कि वह स्वयं बूढ़ा हो चला है वह माता की सेवा कैसे कर सकता है। रही उसके किशोर पुत्र की बात तो वह अपने माता-पिता की सेवा करे या दादी की। श्रीमती गुप्ता कहती हैं कि जमाना जालिम है यह तो मुझे पता था, परन्तु इतना जालिम है यह नहीं पता था।

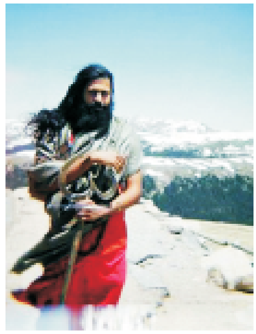

१४ वर्ष पूर्व मेरी एक सखी जो सेवानिवृत्त प्रिंसीपल है, (श्रीमती शर्मा) ने मुझसे आग्रह किया कि वह गुरु पूर्णिमा के दिन एक वैन किराए पर लेकर ऋषिकेश से कुछ दूरी पर स्थित अपने गुरु जी के आश्रम में जा रही हैं और मैं भी उनके साथ चलूँ। उनके साथ ८ व्यक्ति और जा रहे थे जो सभी डाक्टर, इंजीनियर, एस.डी.ओ. आदि थे। मैंने हाँ कर दी। हम आश्रम में पहुँचे तो गुरु जी अनुपस्थित थे। आश्रम स्थित औषधालय के संचालक ने बताया कि गुरु जी को आज विदेश से लौटना था, परन्तु कोई कारण होगा जिससे उन्हें देर हो गई है। जब रात्रि में दस बजे तक भी गुरु जी नहीं आए तो मेरे अतिरिक्त सभी लोग सो गए। मुझे मच्छरों के कारण नींद नहीं आ रही थी, मैं आश्रम की सीढ़ियों में बैठ गई। प्रातः चार बजे मैंने गुरु जी और औषधालय के संचालक की कनबतियाँ सुनीं। उनकी बातों का सार यह था- गुरु जी विदेश से औषधियों की बोतलों में वर्जित नशीले पदार्थ (Drugs) ला रहे थे कि एयरपोर्ट पर सामान की चैकिंग कराते पकड़े गए। अगले दिन रविवार होने के कारण थाने में बन्द रहे। दोपहर में एक मंत्री, जो उनका भक्त था, की सिफारिश से छूटे और एक ट्रक में सवारी लेकर आश्रम तक पहुँचे हैं। इतनी देर में उजाला हो गया, गुरु जी मुझे देखकर चौंक गए। उन्हें जब पता लगा कि मैं श्रीमती शर्मा के साथ आई हूँ तो उन्होंने श्रीमती शर्मा को बहुत डांटा। दिन में २ बजे जब गुरु जी का प्रवचन हो रहा था तब मैं आश्रम का जायज़ा लेने लगी। एक कोठरी में मुझे एक अधेड़ महिला दिखाई दी। उसने मुझे बताया कि पहले गुरु जी ने कई वर्षों तक उसे फँसाये रखा, अब उसके वृद्ध हो जाने के कारण २ वर्षों से उन्होंने आशा नामक एक युवा महिला को फाँस लिया है। उसने मुझे संकेत से बतला दिया कि वह लम्बी और इकहरे बदन की सांवली महिला, आशा है। मैं अवसर पाकर आशा से मिली। आशा ने मुझे बताया कि गुरु जी ने उसके १४ वर्षीय पुत्र को किसी अनजान विद्यालय के छात्रावास में रखा हुआ है, यदि उसे उसका पुत्र मिल जाए तो वह आश्रम छोड़ देगी। मैंने उसे कहा कि एक कागज कलम लाकर मेरा पता नोट कर ले तथा मेरे पास यमुनानगर आ जाए। श्रीमती शर्मा ने मुझे आशा के साथ देखा तो तुरन्त अपने सभी साथियों को लेकर गाड़ी में आ बैठीं। आशा ने दौड़कर वैन का दरवाजा पकड़ लिया। श्रीमती शर्मा ने आशा को जोर से धक्का देते हुए कहा- गुरु जी जो करेंगे ठीक करेंगे"। इतना कहने के बाद ड्राईवर को गाड़ी चलाने का आदेश दिया। श्रीमती शर्मा की पुत्रवधु ने बताया कि गुरु जी ने कुछ दिन के बाद ही वह आश्रम छोड़ दिया था तथा अब वह वृन्दावन में छद्म नाम से रह रहे हैं। मैंने अपने पुत्र से बात की। पुत्र ने मुझे नसीहत दी कि मैं चुप रह जाऊँ, इन लोगों के हाथ बड़े लम्बे होते हैं। मैं चुप तो रही परन्तु मन में यह विचार बार-बार कौंधता है कि ईश्वर की कृपा हो कि हमारे समाज में ऐसी जागृति आए कि ढोंगी, पाखण्डी गुरुओं से सावधान रहें।

❑❑❑

कुसुम अग्रवाल , बी.-8, पेपर मिल कॉलोनी, यमुनानगर

Watch your thoughts, for they become words
Watch your words, for they become action
Watch your action, for they become habits
Watch your habits, for they become character
Watch your character, for it become your destiny

जिन पाठकों की सदस्यता को 1 वर्ष पूर्ण हो गया है, उनसे प्रार्थना है कि वे नवीनीकरण शुल्क अविलम्ब भेजने का श्रम करें।

DRINKING WATER ON EMPTY STOMACH

It is popular in Japan today to drink water immediately after waking up every morning. Furthermore, scientific tests have proven its value.. We publish below a description of use of water for our readers. For old and serious diseases as well as modern illnesses the water treatment had been found successful by a Japanese medical society as a 100% cure for the following diseases:

Headache, body ache, heart system, arthritis, fast heart beat, epilepsy, excess fatness, bronchitis asthma, TB, meningitis, kidney and urine diseases, vomiting, gastritis, diarrhea, piles, diabetes, constipation, all eye diseases, womb, cancer and menstrual disorders, ear nose and throat diseases.

METHOD OF TREATMENT

- As you wake up in the morning before brushing teeth, drink 4 x 160ml glasses of water
- Brush and clean the mouth but do not eat or drink anything for 45 minute .

- After 45 minutes you may eat and drink as normal.
- After 15 minutes of breakfast, lunch and dinner do not eat or drink anything for 2 hours .
- Those who are old or sick and are unable to drink 4 glasses of water at the beginning may commence by taking little water and gradually increase it to 4 glasses per day.
- The above method of treatment will cure diseases of the sick and others can enjoy a healthy life.
- The following list gives the number of days of treatment required to cure/control/ reduce main diseases:

1. High Blood Pressure (30 days)
2. Gastric (10 days)
3. Diabetes (30 days)
4. Constipation (10 days)
5. Cancer (180 days)
6. TB (90 days)
7. Arthritis patients should follow the above treatment only for 3 days in the 1st week, and from 2nd week onwards - daily.

Sent by- Vijay Arya (Major)

This treatment method has no side effects, however at the commencement of treatment you may have to urinate a few times.

This makes sense . The Chinese and Japanese drink hot tea with their meals not cold water. Maybe it is time we adopt their drinking habit while eating!!! Nothing to lose, everything to gain...

For those who like to drink cold water, this article is applicable to you.

It is nice to have a cup of cold drink after a meal. However, the cold water will solidify the oily stuff that you have just consumed. It will slow down the digestion.

Once this "sludge" reacts with the acid, it will break down and be absorbed by the intestine faster than the solid food.. It will line the intestine. Very soon, this will turn into fats and lead to cancer. It is best to drink hot soup or warm water after a meal.

❑❑❑

Attempt On Line Test
Win Rs. 5100/-
Log on www.satyarthprakashnyas.org

शब्द यात्राएँ

पशु से फीस (Fees) तक

डॉ. पूर्ण सिंह डबास

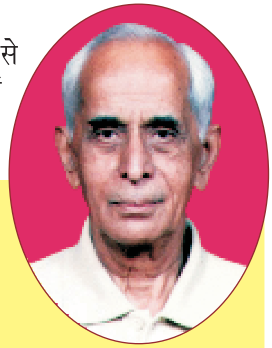

संस्कृत की एक धातु पश् है जिसका अर्थ है- बाँधना, कसना या जकड़ना। यही पश् धातु अवेस्ता में पस् (Pas) रूप में, लैटिन में पॅक्-इस्कोर (Pac–iscor) एवं पक्ष् (Pax) रूप में, गौथिक में फान् (Fahn) रूप में तथा ऐंग्लो-सैक्सन में फॉन (Fon) रूप में मिलती है।

इसी पश् धातु से संस्कृत में पाश शब्द बनता है जो 'फंदा, बन्धन, जकड़न रस्सी तथा श्रृंखला' का बोधक है। संस्कृत में इसका प्रयोग यमपाश (= यम का फन्दा) से लेकर कर्णपाश(= सुन्दर कान) केशपाश(= केश राशि, बालों की लटें) तथा पाशक्रीड़ा (= पाशों का खेल; जुआ) आदि तक व्यापक संदर्भों में हुआ है।

सं.पशु (अवेस्ता में भी पशु) का संबंध भी पश् धातु से है। पशु का मूलार्थ है-जो पाश या फंदे से जकड़ा गया हो तथा जिसे बाँधकर रखा गया हो। इस प्रकार बन्धन-युक्त या पालतू जानवर पशु कहलाए तथा इसके विपरीत स्वच्छन्द घूमने वाले या जंगली जानवरों को मृग[1] कहा गया। संस्कृत में उनके नामों का उल्लेख करते हुए पाँच[2] प्रकार के पशु गिनाए गए हैं- मनुष्य, गाय, घोड़ा, भेड़ तथा बकरी। कभी-कभी इनके साथ खच्चर और गधे अथवा ऊँट और कुत्ते की गणना भी की गई है। तिरस्कार पूर्ण प्रसंगों में मनुष्य को 'नरपशु' कहा गया है। संस्कृत में प्राप्त पशु शब्द के आरम्भिक प्रयोगों में तो यह ('मृग' के विपरीत) बाँधे जाने वाले या पालतू पशुओं के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है किन्तु कालान्तर में पालतू, जंगली, हिंसक और अहिंसक सभी जानवरों के लिए इसका प्रचलन हो गया। प्राकृत में इसका रूपान्तरण पसु है जहाँ यह चौपाए या चतुष्पाद प्राणी के साथ-साथ पशु विशेष अर्थात् अज या बकरे का भी बोधक है।

संस्कृत पशु लैटिन भाषा में पेकुस (Pecus) रूप में मिलता है और वहाँ भी इसका अर्थ पशु या पशु-समूह ही है। इसी का एक रूप वहाँ पिक्यूनिया (Pecunia)[3] भी है जिसका अर्थ है-धन या रुपया । लैटिन का पेकुस् वहाँ से ऐंग्लो-सैक्सन (पुरानी अंग्रेजी) में पहुँचा जहाँ यह फिओ (Feoh) तथा फिओ (Feo)रूप में मिलता है। यहाँ पर इसमें पशु या पशु-धन के साथ-साथ सम्पत्ति का अर्थ भी विकसित हो गया। (सम्पत्ति के रूप में पशुओं का चलन तथा उनके विनिमय द्वारा एक दूसरे से आवश्यकता की वस्तुएँ लेने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। संस्कृत तथा हिन्दी में प्रचलित पशुधन, गोधन तथा वाजिधन आदि शब्द भी पशु-सम्पत्ति की ओर संकेत करते हैं।) प्राचीन अंग्रेजी से मध्यकालीन अंग्रेजी में पहुँचते-पहुँचते इसने फी (Fee) रूप धारण कर लिया जो आधुनिक अंग्रेजी में भी इसी रूप में प्रचलित है। आधुनिक अंग्रेजी में फी(Fee) का प्रयोग-विशिष्ट सेवाओं के बदले चुकाया जाने वाला मूल्य, शुल्क, पारिश्रमिक, मेहनताना तथा इनाम आदि नए विकसित अर्थों में होता है तथा प्राचीन एवं मध्यकालीन अंग्रेजी में प्रचलित इसके पशु, सम्पत्ति, भूमिदान तथा धन आदि अर्थ लुप्त हो गए हैं। अंग्रेजी में Fee का प्रयोग क्रिया रूप में भी होता है जिसका अर्थ है- शुल्क या फीस देना अथवा वेतन पर नियुक्त करना।

अंग्रेजी से फी(Fee) शब्द हिन्दी में आया और फीस बन गया तथा पहचानना कठिन हो गया कि यह संस्कृत के उसी पशु शब्द का रूपान्तरण है जो हजारों साल पहले यूरोपीय भाषा में गया था।

संस्कृत का पशु[4] शब्द लैटिन से होते हुए अंग्रेजी में ही नहीं बल्कि यूरोप की अन्य अनेक भाषाओं में भी पहुँचा। उदाहरण के लिए प्राचीन उच्च जर्मन में इसका रूप फिउ (Fchu) है, जर्मन में फी (Vich, इसका उच्चारण जर्मन में 'फी' है) तथा गौथिक में यह फैउ (Faihu) रूप में मिलता है। पुरानी प्रुस्सियन (बाल्टिक) में इसने पेक्कु (pecku) रूप धारण कर लिया है, स्वीडिश में फा (Fa) तथा डेनिश में फे (Fae) हो गया है और रूसी में प्योस् बन गया है।

१. परवर्ती संस्कृत तथा हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में मृग का अर्थ संकुचित होकर पशु विशेष हो गया है किन्तु मृगया मृगमरीचिका, मृगराज आदि समस्त पदों में इसका मूलार्थ पशु अब भी सुरक्षित है।

२. ए संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी मोनियर विलियम्स

३. अंग्रेजी के निजी सम्पत्ति तथा आर्थिक धन संबंधी आदि शब्द भी इसी से विकसित हैं।

४. पाश के साथ साथ पशु का संबंध सं. दाम, दामन से भी है। फा. में भी सं. दाम का प्रतिरूप दाग ही है और फंदे तथा जाल आदि के साथ साथ प्रत्येक उस पशु जाति का बोधक है जो हिसक नहीं है जैसे हिरन,नीलगाय, सांभर चीतल आदि। सं. के इसी दाम से सं. दम/दमन तथा अं. आदि का संबंध है।

ईश्वर, वेद और मनुष्य

मनमोहन आर्य

हम और यह संसार हमें बना बनाया मिला है। माता-पिता ने हमें जन्म दिया और हमारा पालन पोषण किया। हमें योग्य अध्यापकों व गुरुओं से पढ़ाया अथवा प्रयास किया। हमें यदि गुरुओं की शरण, विद्यालय या पाठशालाओं में न भेजते तो हमारा जीवन कैसा होता, इसकी हम कल्पना ही कर सकते हैं। हम यह भी कल्पना कर सकते हैं कि यदि हमें अपने गुरुओं से योग्य गुरु, विद्यालय व वातावरण मिलता तो हमारा बौद्धिक, मानसिक व आत्मिक व शारीरिक विकास वर्तमान से कुछ अधिक अच्छा हो सकता था। इतिहास एवं आप्त वचनों से सिद्ध है कि महाभारत काल के पश्चात् वैदिक धर्म व संस्कृति का ह्रास ऐसा हुआ कि वेदों का यर्थाथ ज्ञान विलुप्त हो गया और अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियों ने जड़े जमा लीं। मध्यकाल व बाद में अस्तित्व में आई मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, बाल विवाह, पुनर्विवाह में धार्मिक सहमति का अभाव, अस्पृश्यता, छुआ-छूत, ऊँच-नीच, मैला ढोने जैसी प्रथा, मजदूरों का शोषण आदि नाना प्रकार की बहुत सी कुप्रथायें आज भी विद्यमान हैं। जिस प्रकार सूर्यास्त हो जाने पर कुछ भी दिखाई नहीं देता और रात्रि छा जाती है, इसी प्रकार से वेदों के अनुसार ईश्वर, आत्मा व प्रकृति के सत्य स्वरूप व सामाजिक, राजनैतिक एवं सत्य-विज्ञान संबंधी सभी प्रकार के ज्ञान के अभाव में सामाजिक जगत् में अन्धकार फैल गया जिसका उल्लेख पूर्व पंक्तियों में किया है।

हम देखते हैं कि इसी अवधि में आर्यावर्त्त से अन्यत्र कुछ नये मत-सम्प्रदाय अस्तित्त्व में आये। उनकी ईश्वर संबंधी मान्यताओं पर ध्यान दें तो लगता है कि पूर्वजन्मों के संस्कारों व वर्तमान जन्म के किन्ही के किन्हीं विश्वासों के कारण वह ईश्वर में विश्वास तो रखते हैं परन्तु वह ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को जान हीं नहीं पाये। उन्होंने अपने समय की मान्यताओं के आधार पर कल्पना की कि ईश्वर भी किसी एक मनुष्य वा स्त्री की तरह है जो कि दिव्य, विराट्, महान्, अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न है। उन्हें ध्यान ही नहीं रहा कि इतना विशाल ब्रह्माण्ड उस कल्पित एकदेशी ईश्वर, जो कि मनुष्य के रूप में स्वीकार किया गया, द्वारा बन हीं नहीं सकता।

नाना प्रकार की असम्भव एवं अनुचित बातें मध्यकाल में अस्तित्त्व में आए विदेशी एवं देशी मतों में विद्यमान हैं। मुक्ति व मोक्ष का भी स्वरूप इन सभी मतों में प्राप्त होता है वह भी तर्क व प्रमाणों से असिद्ध होने से यथार्थ नहीं है। दूसरी ओर वेदों को देखें तो ईश्वर का ऐसा स्वरूप हमारे सामने आता है जो तर्कों व प्रमाणों से तो पुष्ट है ही, साथ ही वेद एवं वैदिक साहित्य समर्थित, आप्त प्रमाणों से पूर्ण एवं तर्क की कसौटी पर खरा होने के साथ-साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी सम्पुष्ट एवं सिद्ध है। वेदों में ईश्वर का जो स्वरूप होता है उसके अनुसार ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी,

> "ईश्वर आदि-मनुष्यों को भाषा एवं वेदों का ज्ञान न देता तो मनुष्य न तो भाषा ही बना सकते थे और न ईश्वर, आत्मा व प्रकृति के स्वरूप का यर्थाथ ज्ञान ही प्राप्त कर सकते थे" –मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के इन गुणों व विशेषणों को आर्य समाज का दूसरा नियम बनाया है। संसार भर के धार्मिक व मत-मतान्तरों के साहित्य एवं धर्म-मत के पुस्तकों में ईश्वर का एक स्थान पर ऐसा स्वरूप वर्णन दुर्लभ व असम्भव है। वेद वर्णित ईश्वर के इस स्वरूप के परिप्रेक्ष्य में जब हम वेद से दूर व वेदज्ञान से रहित मनुष्यों द्वारा कल्पित ईश्वर के स्वरूप को देखते हैं तो हमारे मन में विचार आता है कि यदि ईश्वर ने वेदों का ज्ञान न दिया होता तो मनुष्य या तो ईश्वर के सत्य स्वरूप की कल्पना ही न कर पाता और यदि कुछ करता भी तो वह आजकल के विदेशी मतों व भारतीय मूर्तिपूजा जैसे अनेकानेक रूपों में प्राप्त कल्पना से भी बहुत निम्न स्तर की होती। हमें लगता है कि हम लोग अतीव भाग्यशाली हैं जिन्हें वेदों का ज्ञान प्राप्त है एवं जिस कारण हमें न केवल ईश्वर के सत्य स्वरूप का ज्ञान ही प्राप्त है अपितु ईश्वर के अतिरिक्त अन्य सत्ताओं यथा जीव व प्रकृति के सत्य स्वरूप से भी पूर्णतया परिचित हैं। इसके साथ जीवन के सभी पहलुओं व व्यवहार, कर्तव्य व धर्माधर्म जैसी सभी बातों का भी हमें सत्य ज्ञान प्राप्त है। संसार के मनुष्यों की भलाई इसी में है कि वे वैदिक धर्म की शरण में आकर सत्य धर्म व सत्य मान्यताओं को प्राप्त करें अन्यथा उनका यह जीवन व्यर्थ हो जायेगा। हम यहाँ एक उदाहरण देना चाहते हैं जो कि एक नास्तिक मनुष्य के आस्तिक बनने की तर्कपूर्ण कहानी है। एक नास्तिक मनुष्य का आस्तिक बच्चा बहुत ही बुद्धिमान था। उसने अपने पिता को सबक सिखाने के लिए एक बार अपने ड्राइंग रूम में लगी अपने दादा-दादी की फोटो को उतार कर नीचे रख दिया। सायं जब पिता घर पर आये तो उन्होंने देखा कि फोटो अपने स्थान

पर नहीं है। पिता ने अपने बेटे से पूछा कि उसने दीवार पर लगी फोटो क्यों हटाई?बच्चे ने अपने अन्दाज में कहा कि उसने फोटो नही हटाई? पिता बच्चे के उत्तर से सन्तुष्ट नहीं हुए और कहा कि फोटो अपने आप वहाँ से कदापि नहीं हट सकती। जरूर उस बच्चे ने ही उसे हटाया है। इस पर बच्चे ने तपाक से कहा कि पिताजी जब, आपके अनुसार, यह विशाल ब्रह्माण्ड, जो कि ज्ञानरहित एवं जड़ है, बिना किसी रचनाकार या सृष्टिकर्ता के अपने आप/स्वतः बन सकता है व चल भी सकता है तो फिर एक छोटी-सी फोटो स्वयं एक स्थान से दूसरे स्थान पर क्यों नहीं जा सकती?जबकि यह तो बहुत साधारण बात है। पिता पुत्र के इस उत्तर को सुनकर भौचक्के रह गये। बच्चे की बात में दम था। विचार करने पर पिता ने स्वीकार कर लिया कि यह ब्रह्माण्ड अवश्य किसी सत्ता के द्वारा रचित, निर्मित व संचालित है। हम इस उदाहरण से यह कहना चाहते हैं कि जब संसार स्वयं नहीं बना तो सत्य ज्ञान भी बिना दिये, बिना बताये व सिखाये मनुष्यों द्वारा स्वयं निर्मित नहीं हो सकता। इसका प्रेरक, कर्ता व दाता अवश्य ही कोई ज्ञानवान सत्ता होगी और वही ज्ञान का प्रादुर्भाव करेगी।

उपर्युक्त भूमिका के परिप्रेक्ष्य में अब हम उस स्थिति की कल्पना करते हैं कि यदि ईश्वर न होता तो क्या मनुष्य ज्ञान का विकास कर ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति के विषय में वैसा ही ज्ञान प्राप्त कर सकता था जैसा कि वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द ने व उनके पूर्व के हमारे ऋषि-महर्षियों व आप्त पुरुषों ने हमें दिया है? हमारा विवेक कहता है कि मनुष्य ऐसा कदापि नहीं कर सकते थे। पहली बात तो यह है कि बिना परमेश्वर के यह सृष्टि ही अस्तित्व में न आती और मनुष्य के उत्पन्न होने का तो प्रश्न ही नहीं है। हमारे पश्चिमी वैज्ञानिक ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते। उनका मानना है कि प्रकृति में यह गुण है कि वह स्वयं घनीभूत होकर बन जाती है और अब चल रही है इसी प्रकार चल सकती है। यह बहुत ही लचर युक्ति है। यदि इसे स्वीकार कर लें तो फिर यह बात अनुत्तरित रहती है कि सृष्टि में स्वयं रचना करने के गुण के विपरीत प्रलय का गुण या धर्म कैसे हो जाता है अर्थात् नहीं हो सकता। वस्तुतः जड़ पदार्थ चेतन सत्ता के द्वारा नियंत्रित एवं व्यवस्थित होते हैं। सृष्टि की उत्पत्ति व रचना एवं इसका संचालन एवं प्रलय निराकार व सर्वव्याप्त एवं सर्वशक्तिमान ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं कर सकता। वैज्ञानिकों के अनुसार मनुष्य, अमीबा नामक एक-कोषीय जीव से विकसित होकर बना है। यह सभी मान्यतायें विदेशियों की कल्पनाओं का ही परिणाम हैं, जो कि यर्थाथ नहीं हैं। उन्हें स्वमत को पुष्ट करना एवं वेद एवं वैदिक विचारधारा का विरोध करना व उसे अपमानित या गलत सिद्ध करना था। हमें लगता है कि जो भी वैज्ञानिक डारविन के विकासवाद को मानते हैं उनकी स्थिति हास्यास्पद है। बिना रचयिता के रचना व बिना सृष्टिकर्ता के सृष्टि को मानना बुद्धिसंगत नहीं है। दूसरा यह सृष्टि अपने आप चल रही है यह भी दोषपूर्ण मान्यता है और यह और भी गलत है कि बिना ईश्वर के ज्ञान दिए मनुष्य स्वयं ज्ञान का सृजन या विकास कर सकता है। अनेक प्रमाणों से यह सिद्ध है कि मनुष्य ज्ञान का विकास स्वयं नहीं कर सकते।

ज्ञान के लिए भाषा की आवश्यकता होती है। भाषा व उसके शब्दों में ही ज्ञान निहित होता है। भाषा बनाने के लिए शब्द चाहिये और शब्द बनाने के लिए भाषा। अतः जब तक भाषा नहीं होगी, शब्द नहीं बनेगें और बिना शब्दों के भाषा अस्तित्व में नहीं आ सकती। इसी प्रकार मनुष्य का विकास किसी अमीबा से नही हुआ अपितु वैदिक सिद्धान्त कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने युवा स्त्री व पुरुषों को उत्पन्न किया। यह एक प्रकार से स्थावर सृष्टि की भाँति हुआ। सूर्य, चन्द्र आदि, पृथिवी, अग्नि, जल, वायु व आकाश एवं वनस्पतियाँ, ओषधियाँ एवं पशु आदि पहले ही उत्पन्न किये जा चुके थे। मनुष्यों को उत्पन्न करने के बाद सबसे पहले ईश्वर ने उन्हें भाषा सहित वेदों का ज्ञान दिया। उसके बाद समयान्तर पर परस्पर कुछ वाद-विवाद होने आदि कारणों से मनुष्य ने एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन करना आरम्भ किया और समय बीतने के साथ-साथ पृथिवी के चारों ओर लोग बस गये। आरम्भ में जो संस्कृत भाषा मिली थी उसमें समय, स्थान, उच्चारणों की भिन्नता एवं अपभ्रंशों के कारण अन्तर आता गया और धीरे-धीरे अधिक दूरी हो जाने के कारण नई भाषाएँ भी अस्तित्व में आती गईं। अब तक सृष्टि की उत्पत्ति को १,९६,०८,५३,११२ वर्ष व्यतीत हो जाने पर पूर्व की सभी भाषायें परिवर्तित होकर वर्तमान रूपों में आई हैं। अनेक भाषाओं में अनेक शब्दों की न्यूनाधिक समानता से इस मत की पुष्टि होती है अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि आज देश व दुनिया में जितने भी मत-मतान्तर हैं, वह वेदों के यथार्थ ज्ञान की न्यूनता, विस्मृति या अनुपलब्धता के कारण ही समय-समय पर अस्तित्व में आए हैं। यदि सृष्टि की आदि में ईश्वर ने वेद न दिए होते तो आज किसी भी मत का अस्तित्व ही न होता।

दुर्भाग्य यह है कि इस विषय में मत-मतान्तरों के लोग सत्य को अपनाने और अपने असत्य को छोड़ने को तैयार नहीं हैं। स्वामी दयानन्द जी ने इस बारे में बहुत ही उचित लिखा है कि मतों को मानने वाले लोग अपने असत्य को सत्य और दूसरे मत के सत्य को असत्य सिद्ध करने में तत्पर रहते हैं अतः वह सत्य को कभी प्राप्त नहीं हो सकते। सत्य मत को प्राप्त होने के लिए इन्हें अपने पूर्वाग्रहों, जिनका कारण अपने प्रयोजन की सिद्धि, अविद्या, हठ, दुराग्रह आदि हैं, छोड़ना होगा। आइए ज्ञान के मूलाधार एवं सब सत्य विद्याओं के पुस्तक वेद को अपनायें, इसका नित्यप्रति स्वाध्याय करें और अपना जीवन सफल करें।

१९६ चुक्खूवाला-२, देहरादून

❑❑❑

बाल वाटिका

विनम्रता ही सदाचार

एक बार सूर्य और हवा में झगड़ा होने लगा । दोनों स्वयं को अधिक शक्तिशाली बता रहे थे । पर्याप्त समय बीतने पर भी कोई निष्कर्ष नहीं निकल पाया। इतने में दोनों ने एक यात्री को आते देखा। उस यात्री ने एक कम्बल ओढ़ रखा था। दोनों में सहमति बनी कि जो कोई उसका कम्बल उतरवा सके वही बलशाली माना जावेगा।

यहाँ भी बड़बोली हवा ने कहा कि पहली बारी उसकी होगी। सूर्य ने उसकी बात मान ली। अब क्या था । हवा अत्यन्त वेग से बहने लगी। पर यात्री ने और भी कसकर कम्बल लपेट लिया ताकि वह उड़ न जाए। हवा ने अपना वेग अत्यंत प्रबल कर दिया पर नतीजे में यात्री ने और भी कसकर कम्बल लपेट लिया । अंत में हवा ने अपनी कोशिश छोड़ दी।

अब सूर्य की बारी थी। सूर्य ने प्रारम्भ में धीरे-धीरे तपन बढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। यात्री ने गरमी महसूस की तथा अपना कम्बल ढीला कर दिया तब सूर्य ने तेज तपना प्रारम्भ कर दिया । देखते-देखते यात्री ने अपना कम्बल उतार थैले में रख दिया। हवा को अपनी हार माननी पड़ी और उसका अभिमान नष्ट हो गया ।

सच ही कहा है कि जब विनम्रता से काम हो जाय तो क्रोध और बल प्रयोग से क्या काम ।

दयानन्द सूक्ति - संग्रह

विद्या के अधिकारी

हे विद्वानों! जो जितेन्द्रिय, तीव्र बुद्धि वाले, विद्या ग्रहण के अर्थ प्रवृत्त विद्यार्थी हों, उनको अहिंसाशील, बुद्धिमान्, विद्या और धर्म के धारक करो। - ऋ ८/१६/१२

जैसे ईन्धनों से अग्नि प्रदीप्त होकर, वर्षाजल से पृथ्वी को आच्छादित करता है, वैसे ही ब्रह्मचर्य, सुशीलता, पुरुषार्थ से विद्यार्थीजन सुप्रकाशित होकर जिज्ञासुओं के हृदय से विद्या का विस्तार करते हैं। - ऋ.७/१७/१

जो पराक्रम और बल को न नष्ट करे, शरीर और आत्मा की उन्नति करता हुआ रक्षक हो, उसके लिए आप्तजन विद्या दें। जो इससे विपरीत, लम्पट, दुराचारी, निन्दक हो, वह विद्याग्रहण में अधिकारी नहीं होता, यह जानो। -यजु. २८/४४

किसी पुरुष व स्त्री को विद्या पढ़ने का अधिकार नहीं है, ऐसा किसी को नहीं समझना चाहिए, किन्तु सर्वथा सबको पढ़ने का अधिकार है। - ऋ. १७१/२

जो विद्यार्थियों को अत्यन्त प्रेम से धर्मयुक्त व्यवहार की शिक्षापूर्वक विद्या देने के लिए तन, मन और धन से प्रयत्न करे, उसको 'आचार्य' कहते हैं। -व्यवहारभानु, पृ.१२

जो बुरी चेष्टा देखकर लड़कों को न घुड़कते और न दण्ड देते हैं, वे क्योंकर माता-पिता और आचार्य हो सकते हैं? - व्यवहारभानु, पृ. १३

जो सांगोपांग वेद विद्याओं का अध्यापक, सत्याचार का ग्रहण और मिथ्याचार का त्याग करावे, वह 'आचार्य' कहाता है। - स.प्र.,स्वमन्तव्या.,पृ. ५६३

शिष्य उसको कहते हैं जो सत्य शिक्षा और विद्या को ग्रहण करने योग्य धर्मात्मा, विद्याग्रहण की इच्छा और आचार्य का प्रिय करने वाला है। - स.प्र.स्वमन्तव्या.,पृ. ५६०

आचार्य अपने शिष्य को उपदेश करे और विशेषकर राजा इतर क्षत्रिय, वैश्य और उत्तम शूद्र जनों को भी विद्या का अभ्यास अवश्य करावें। क्योंकि जो ब्राह्मण हैं, वे ही केवल विद्याभ्यास करें और क्षत्रियादि न करें तो विद्या धर्म, राज्य और धनादि की वृद्धि कभी नहीं हो सकती। - स.प्र. समु. ३,पृ. ५३

जब क्षत्रियादि अविद्वान् होते हैं तो वे जैसा अपने मन में आता है, वैसा ही करते-कराते हैं। इसलिए ब्राह्मण भी अपना कल्याण चाहें तो क्षत्रियादि को वेदादि सत्यशास्त्र का अभ्यास अधिक प्रयत्न से करावें। क्योंकि क्षत्रियादि ही विद्याधर्म, राज्य और लक्ष्मी की वृद्धि करने हारे हैं। - स.प्र. ,समु. ३,पृ.५४

जब ब्राह्मण लोग विद्याहीन हुए तब क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के अविद्वान् होने में तो कथा ही क्या कहनी? केवल जीविकार्थ पाठ मात्र ब्राह्मण लोग पढ़ते रहे, सो पाठ मात्र भी क्षत्रियादि को न पढ़ाया। क्योंकि जब अविद्वान् हुए गुरु बन गये तब छल, कपट, अधर्म भी उनमें बढ़ता चला। -स.प्र.समु ११,पृ. २७७

जब क्षत्रियादि यजमान संस्कृत विद्या से अत्यन्त रहित हुए, तब उनके सामने जोर गप्प मारी, सोर बिचारों ने सब मान ली। - स.प्र.,समु. ११ पृ. २७७

संकलनकर्ता - वेदाचार्य डॉ. रघुवीर वेदालंकार

श्री जयदेव आर्य
न्यासी
राजकोट

श्री जयदेव आर्य सौम्य स्वभाव के मितभाषी उद्योगपति है। अपनी मुस्कराहट से स्नेह वर्षा करने वाले कर्मशील आर्य जी इस न्यास के न्यासी है यह प्रसन्नता तथा गौरव का विषय है। न्यास को उनका संबल सदैव प्राप्त है।

श्री धर्मपाल आर्य अपने पूज्य पिता परम ऋषि-भक्त श्री दीपचन्द आर्य से वैदिक संस्कार परम्परा मे प्राप्त कर यथाशक्य उनके संवर्धन में लगे हैं। आप एक सफल उद्योगपति के अतिरिक्त आर्ष साहित्य प्रचार न्यास के माध्यम से वैदिक साहित्य के प्रसारण में अग्रणी स्थान पर अवस्थित हैं। अपने पूज्य पिता के कार्य तथा विचार को वे उच्च आयाम प्रदान करेंगे यह निश्चय है।

श्री गोपीलाल ऐरन उदयपुर नगर के सुविख्यात आयकर विशेषज्ञ हैं, अपनी व्यावसायिक प्रतिबद्धता एवं ईमानदारी के लिए प्रख्यात है। न्यास के आरम्भ से ही आप उससे जुड़े हैं, कई वर्षो तक न्यास के मंत्री के रूप में अपनी सेवाए दी हैं।

श्री धर्मपाल आर्य
न्यासी
दिल्ली

श्री गोपी लाल ऐरन
न्यासी
उदयपुर

Title Verification - RAJHIN16158/20/1/2012-TC

जो राजा साहस में वर्त्तमान पुरुष को न दण्ड देकर सहन करता है, वह राजा शीघ्र ही नाश को प्राप्त होता है और राज्य में द्वेष उठता है।

सत्यार्थ प्रकाश पृ.-१७४

..... उस पापी को (व्यभिचारी को) लोहे के पलङ्ग को अग्नि से तपा के, लाल कर, उस पर सुलाके जीते को बहुत पुरुषों के सम्मुख भस्म कर देवे।

सत्यार्थ प्रकाश पृ.-१७५

जहाँ कृष्णवर्ण-रक्तनेत्र
भयङ्कर पुरुष के समान
पापों का नाश करनेहारा दण्ड विचरता है,
वहाँ प्रजा मोह को प्राप्त नहीं होकर आनन्दित होती है।

सत्यार्थ प्रकाश पृ.-१४२

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य